श्री श्री भागवत-पत्रिका

वर्ष—१९ राष्ट्रभाषा हिन्दीमें श्रीश्रीरूप-रघुनाथकी वाणीकी एकमात्र वाहिका संख्या—५-८

गौड़ीय उपास्य अभिन्न-ब्रजेन्द्रनन्दन—श्रीगौराङ्ग

• स्तवमाला • गुरुवर्गका वाणी-वैभव • श्रील गुरुदेवके वचनामृत

संस्थापक एवं नियामक

नित्यलीलाप्रविष्ट परमहंस ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके

अनुगृहीत

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

प्रेरणा-स्रोत
नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

सम्पादक—श्रीमाधवप्रिय दास ब्रह्मचारी, श्रीअमलकृष्ण दास ब्रह्मचारी

प्रचार सम्पादक संघ—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त वन महाराज
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त सिद्धान्ती महाराज
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त पद्मनाभ महाराज
श्रीयुक्ता उमा दासी, श्रीयुक्ता सुचित्रा देवी दासी

सहकारी सम्पादक संघ—डॉ. श्रीअच्युतलाल भट्ट, एम. ए., पी-एच. डी.
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारसिंह महाराज
डॉ. (श्रीमती) मधु खण्डेलवाल, एम. ए., पी-एच. डी. श्रीपरमेश्वरी दास ब्रह्मचारी 'सेवानिकेतन'

कार्याध्यक्ष—श्रीपाद प्रेमानन्द दास ब्रह्मचारी 'सेवारत्न'

कार्यकारी मण्डल—श्रीगोकुलचन्द्र दास, श्रीसुबलसखा दास, श्रीप्रेमदास

ले-आउट, फोटो एवं डिजाइन—श्रीभक्तबान्धव कृष्णकारुण्य महाराज

कार्यकारी सहायक—गौरराज दास, राधारमण दास, पूजा दासी, विजयलक्ष्मी दासी, गौरप्रिया दासी

आभार—सुशीलकृष्ण दास, शचीनन्दन दास

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
जवाहर हाट, मथुरा-२८१००१(उ. प्र.)

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति ट्रस्टकी ओरसे
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज द्वारा
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरासे प्रकाशित।

www.purebhakti.com www.harikatha.com
bhagavata.patrika@gmail.com

॥ श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ॥

वर्ष ❀ १९

श्रीगौराब्द - ५३६
वि. सं. - २०७९; श्रीधर-दामोदर मास ; सन् - २०२२ (१४ जुलाई - ८ नवम्बर)

संख्या ❀ ५-८

विषय-सूची

'स्तव-वैभव'

श्रीस्तवमालाके अन्तर्गत श्रीगोवर्धनोद्धर २
—श्रील रूप गोस्वामी

गुरुवर्गका वाणी-वैभव

श्रीचैतन्य-शिक्षा ४
—श्रील भक्तिविनोद ठाकुर

श्रीश्रीसरस्वती-संलाप ६
—श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर 'प्रभुपाद'

स्त्रियोंके लिए गृहस्थ आश्रम ही कल्याणजनक है ८
—श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज

श्रीगौड़ीय-पत्रिकाका अट्ठाईसवाँ वर्ष ९
—श्रील भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

दरिद्र-नारायणकी सेवा? १२
—श्रील भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम गोस्वामी महाराज

श्रील गुरुदेवके वचनामृत

अपने लिए काल्पनिक प्रशंसा प्रकाशित करना मृत्युके समान १६
—ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

आम्नाय विवृत्ति १८
—ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

साधु वाणी

श्रीचरणामृत २२

धारावाहिक

श्रीगौराङ्ग-सुधा २५

श्रीचैतन्य महाप्रभुके मनोऽभीष्ट-संस्थापक
श्रीश्रील रूप गोस्वामी प्रभुके द्वारा प्रणीत

श्रीस्तवमालाके अन्तर्गत

(वर्ष-१९, संख्या-१-४से आगे)

अथारिष्टवधादिकम्।

मनसिजफणिजुष्टे लब्धपातोऽस्मि दुष्टे
तिमिरगहनरूपे हन्त संसारकूपे।
अजित निखिल रक्षाहेतुमुद्धारदक्षा-
मुपनय मम हस्ते भक्तिरज्जुं नमस्ते॥४३॥

मैं कन्दर्परूप भयङ्कर सर्पके द्वारा आक्रान्त और गाढ़ अन्धकारसे आवृत भयानक संसार कूपमें निपतित हूँ, अतएव हे अजित! मैं पुनः पुनः आपको प्रणाम करके निवेदन कर रहा हूँ कि समस्त जीवोंके उद्धारके उपाय स्वरूप अपनी भक्तिरूप रज्जूको मेरे हाथोंमें प्रदान करें॥४३॥

समस्त पुरुषार्थतः पृथुतयाद्य भक्तिं विदन्-
वदन्नपि न यद्भजेत्त्वद कृपात्र हेतुर्विभो।
प्रसीद यमुनातटे लुठितमूर्त्तिरभ्यर्थये
कृपां कृपणनाथ हे कुरु मुकुन्द मन्दे मयि॥४४॥

भृङ्गारच्छन्दः।

॥इति कंसवधान्ताः श्रीकृष्णलीलाः समाप्ताः॥

हे प्रभो! समस्त पुरुषार्थोंकी तुलनामें आपकी भक्ति ही प्रधान है, ऐसा जानते हुए भी पण्डितगण आपकी भक्तिसे विमुख होकर अन्य-अन्य मार्गोंका अवलम्बन करते हैं। इसका कारण यह है कि आपकी कृपाके बिना आपकी भक्ति प्राप्त करनेमें कोई भी समर्थ नहीं हो सकता। अतएव हे दीननाथ! हे मुकुन्द! मैं यमुनातटपर लोट-पोट करते हुए आपसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि मुझ मन्द-भाग्य व्यक्तिपर अनुग्रह करके मेरा संसार सागरसे उद्धार करें॥४४॥

अथ विशेषतः काश्चित्।

श्रीगोवर्धनोद्धराय नमः।

झमज्झमिति वर्षति स्तनितचक्रविक्रीडया विमुष्टरविमण्डले घनघटाभिराखण्डले।
ररक्ष धरणीधरोद्धृतिपटुः कुटुम्बानि यः स दारयतु दारुणं व्रजपुरन्दरस्ते दरं॥ १॥

इन्द्रके द्वारा प्रेरित मेघोंके द्वारा गम्भीर गर्जन करते हुए सूर्यमण्डलको आच्छादितकर मूसलाधार वर्षा आरम्भ करनेपर जिन्होंने गोवर्धन पर्वतको ऊपर धारण करके आत्मीय व्रजवासियोंकी रक्षा की थी, वे ही व्रजपुरन्दर श्रीकृष्ण तुम्हारे समस्त भयका नाश करें॥ १॥

महाहेतुवादै र्विदीर्णेन्द्रयागं गिरिब्राह्मणोपास्ति विस्तीर्णरागं।
सपद्येकयुक्ती कृताभीरवर्गं पुरोदत्त गोवर्धनक्ष्माभृदर्घं॥ २॥

हे कृष्ण! आपने प्रबल युक्तिवादके द्वारा गोपोंको इन्द्रकी पूजा करनेसे मना करके उनके द्वारा गिरिगोवर्धन और विप्रोंकी पूजाका उपदेश दिया था तथा आपकी बातको सुनकर गोपगण एकमत होकर सर्वप्रथम गिरिगोवर्धनकी पूजामें प्रवृत हुए थे॥ २॥

प्रियाशंसिनीभिर्दलोत्तंसिनीभि र्विराजत्पटाभिः कुमारीघटाभिः।
स्तवद्भिः कुमारैरपि स्फार तारैः सह व्याकिरन्तं प्रसूनैर्धरन्तं॥ ३॥

समस्त व्रजकुमारों तथा कुमारियोंने सुन्दर रेशमी वस्त्रादिके द्वारा विभूषित होकर इन गोवर्धनके ऊपर पुष्पवृष्टि की और उनसे प्रार्थना की कि वे सन्तुष्ट होकर उनकी मनोकामनाओंको पूर्ण करें तथा वे इस प्रकारसे उच्च-स्वरसे गोवर्धनकी जय घोषणा करने लगे॥ ३॥

गिरिस्थूलदेहेन भुक्तोपहारं वरश्रेणिसन्तोषिताभीरदारं।
समुत्तुङ्गश्रृङ्गावलीबद्धचैलं क्रमात्प्रीयमाणं परिक्रम्य शैलं॥ ४॥

आपने गिरिगोवर्धनके समान विशाल देहको धारण करके गोवर्धन पूजाके लिए लाये गये समस्त भोज्य-द्रव्योंको ग्रहण किया और समागत गोपाङ्गनाओंको वर प्रदान करके परितुष्ट किया तथा गोवर्धनकी प्रदक्षिणा करके उनके अति उच्च शिखरोंको नाना वर्णोंकी पताकाओंके द्वारा सुशोभित किया॥ ४॥

मखध्वंससंरम्भतः स्वर्गनाथे समन्तात्किलारब्धगोष्ठप्रमाथे।
मुहुर्वर्षति च्छन्नदिक्चक्रवाले सदम्भोलि निर्घोषमम्भोदजाले॥ ५॥

स्वर्गनाथ इन्द्रने यज्ञके विध्वंससे उत्पन्न अपमानको अनुभव करके क्रोधित होकर व्रजमण्डलको विनष्ट करनेके लिये महावृष्टि आरम्भ कर दी। मेघमालाओंने सभी दिशाओंको आच्छादित कर लिया तथा चारों ओर महागर्जन और विद्युतपातके साथ महावर्षा होने लगी॥ ५॥

क्रमशः

श्रीचैतन्य-शिक्षा

श्रील भक्तिविनोद ठाकुरका वाणी-वैभव

प्रश्न १—श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षाका गुरुत्व कितना है? उनके द्वारा उपदेश किए गये तत्त्व किस प्रकारसे शिक्षणीय हैं?

उत्तर—"श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षाएँ—गूढ़ एवं वैज्ञानिक तत्त्व हैं। कुछ विशेष मनोयोगके साथ न पढ़नेपर वे बोधगम्य नहीं होती हैं। आजकल बहुत-से लोग भोजनादि करनेके पश्चात् लेटकर उपन्यास पढ़ते हैं। परन्तु महाप्रभुकी शिक्षा-सम्बन्धित ग्रन्थोंको इस प्रकारसे पाठ करनेपर नहीं समझा जा सकता। ये समस्त शिक्षाएँ ही वेद-वेदान्त-शास्त्रोंके गूढ़ तत्त्व हैं। श्रद्धापूर्वक विशेष मनोयोगके साथ अन्यान्य साधुओंके सङ्गमें समालोचनापूर्वक धीरे-धीरे पाठ करनेपर ही ये सब तत्त्व हृदयङ्गम हो सकते हैं।"

(श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षा अध्याय-१)

प्रश्न २—श्रीचैतन्यशिक्षाका सार किस-किस आकारमें व्यक्त हुआ है?

उत्तर—"श्रीगौरचन्द्रका साक्षात् उपदेश है—वेदशास्त्रोंने प्रमाण स्वरूप होकर जीवोंको नौ प्रमेयोंकी शिक्षा दी है। वे प्रमेय इस प्रकारसे हैं—(१) इस विश्वमें एकमात्र श्रीहरि ही परतत्त्व हैं, (२) वे सर्वशक्तिसे युक्त हैं, (३) वे रससमुद्र हैं, (४) जीव उनके विभिन्नांश हैं, (५) कुछ जीव प्रकृति द्वारा ग्रसित हैं, (६) कुछ जीव भावके बलसे प्रकृतिसे मुक्त हैं, (७) यह चिदचित समस्त जगत् श्रीहरिका भेदाभेद प्रकाश है, (८) शुद्धभक्ति ही साधन है, (९) श्रीहरिप्रेम ही साध्यवस्तु है।"

(श्रीगौराङ्गलीला-स्मरण स्तोत्र-१५)

प्रश्न ३— श्रीमन्महाप्रभुने भक्तिसिद्धान्त विरुद्ध [विचार] तथा रसाभासकी निन्दा क्यों की है?

उत्तर—"अचिन्त्य-भेदाभेद तत्त्व ही भक्तिसिद्धान्त है। इसके विरुद्ध जो कुछ भी है, वही (१) भक्तिसिद्धान्त विरुद्ध एवं (२) रसाभास है अर्थात् जो रसकी भाँति प्रतीत हो रहा है, किन्तु रस नहीं है। इन दो प्रकारकी वस्तुओंसे वैष्णवोंको दूर रहना चाहिए, क्योंकि मायावाद आदि भक्तिसिद्धान्त-विरुद्ध वचनोंको सुनते-सुनते जीवका पतन हो जाता है एवं रसाभासकी आलोचना करते करते व्यक्ति सहजिया, बाउल तथा जड़-रसासक्त हो जाता है। जो इन दोषोंसे दूषित हैं, उनका सङ्ग निषेध करनेके लिए श्रीमन्महाप्रभुने भक्तिसिद्धान्त विरुद्ध [विचार] तथा रसाभासको दूर रखनेकी प्रथाका निर्देश दिया है।"

(अमृतप्रवाह भाष्य मध्य १०/११३)

प्रश्न ४—क्या श्रीमन्महाप्रभुने किसी प्रकारकी दुर्नीतिका अनुमोदन किया है?

उत्तर—"Mahaprabhu tells us that a man should earn money in a right way and sincere dealings with other and thier masters; but should not immorally gain it. When Gopinath Patnaik, one of the brothers of Ramanand Rai was being punished by King of Orissa for immoral gains, Sri Chaitanya warned all who attended upon him to be moral in their wordly dealings."

(Chaitanya Mahaprabhu's Life & Precepts)

प्रश्न ५—श्रीमन्महाप्रभुने अपने आचरणके द्वारा गृहस्थके कर्तव्यके विषयमें क्या शिक्षा प्रदान की?

उत्तर—"In His own early life he has taught the Grihsthas to give all sorts of help to the needy and the helpless, and has shown that it is necesary for one who has power to do it, to help the education of the people specially the brahmins who are expected to study the higher subjects of human life."

(Chaitanya Mahaprabhu's Life & Precepts)

प्रश्न ६—क्या श्रीचैतन्यदेवके आचार-प्रचार तथा शिक्षाओंमें कुछ त्रुटियाँ हैं?

उत्तर—"Sri Chaitanya as a teacher has taught man both by precepts and by His holy life. There is scarcely a spot in His life which may be made the subject of criticism. His sannyas, His severity to junior Haridas and such like other acts have been questioned as wrong by certain persons. But as far as we understand, we think, as all other independent men would think, that those men have been led by hasty conclusion or party spirit."

(Chaitanya Mahaprabhu's Life & Precepts)

प्रश्न ७—श्रीमन्महाप्रभुने किसे वेदान्तभाष्यके रूपमें ग्रहण किया है तथा उन्होंने किन तत्त्वोंकी शिक्षा प्रदान की है?

उत्तर—"महाप्रभुने कहा है—एकमात्र प्रणव ही महावाक्य है; उसका जो अर्थ है वह उपनिषदोंमें जाज्वल्यमान है। उपनिषदोंने जो शिक्षा दी है, वह व्याससूत्रोंके द्वारा सम्पूर्णरूपमें अनुमोदित है। श्रीमद्भागवत ही व्याससूत्रका भाष्य है। व्याससूत्रके प्रारम्भमें ही 'जन्माद्यस्य यतः' सूत्रमें परिणामवादको ही सत्य बताया गया है। 'यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते' इस वेद मन्त्रमें भी यही शिक्षा दी गयी है तथा श्रीमद्भागवतमें भी यही अर्थ प्रतिपादित हुआ है। 'परिणामवादमें ब्रह्म विकारी हो जाता है—ऐसी आशंकाके कारण ही शङ्कराचार्यने विवर्तवादकी स्थापना की है। वस्तुतः ब्रह्मविवर्त ही समस्त दोषोंका मूल है एवं परिणामवाद ही सर्वशास्त्रसम्मत विशुद्ध सत्यतत्त्व है।"

प्रश्न ८—श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षाओंका मूल जानने योग्य तत्त्व क्या है?

उत्तर—"श्रीमन्महाप्रभुकी शिक्षाका मूल है—कृष्णप्रेम ही जीवका नित्य-धर्मधन है। उस धर्मधनसे जीव कभी भी नित्य पृथक नहीं हो सकता। किन्तु कृष्ण-विस्मृतिके कारण मायामोहित होनेके कारण जीवका अन्य विषयोंमें अनुराग हो जाता है, जिसके फलस्वरूप क्रमशः उसका कृष्णप्रेमरूपी धर्म-गुप्तप्राय होकर जीवात्माके अन्तःकोषमें छिप जाता है, इसी कारण जीवको संसारदुःख भोगना पड़ता है। पुनः सौभाग्यवश घटनाक्रमसे जीव यदि 'मैं नित्य कृष्णदास हूँ' इस बातका स्मरण करता है, तभी उक्त प्रेम-धर्म पुनः उदित होकर जीवको अवश्य ही स्वास्थ्य प्रदान करता है।"

(चैतन्य शिक्षामृत १/२)

प्रश्न ९—श्रीमन्महाप्रभुकी चरम शिक्षा क्या हैं?

उत्तर—"श्रीमद्भागवतमें कहा गया है—जो श्रद्धायुक्त होकर व्रजरसका वर्णन करते हैं, श्रवण करते हैं, वे ही अतिशीघ्र पराभक्तिरूप प्रेम प्राप्तकर जड़ोदित हृदरोगसे मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं—यही महाप्रभुकी चरम शिक्षा है।"

(चैतन्य शिक्षामृत १/३)

[श्रील भक्तिविनोद वाणी-वैभवसे अनुदित]

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर 'प्रभुपाद' का वाणी-वैभव

श्रीश्रीसरस्वती-संलाप

(वर्ष-१९, संख्या-१-४से आगे)

[महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री महाशयने अपने ग्रन्थागारसे Descriptive Catalogue of Manuscripts of the Asiatic Society Vol. IV निकालकर श्रीवल्लभाचार्य-सम्प्रदायके श्रीगदाधर नामक किसी व्यक्तिके द्वारा लिखित 'सम्प्रदाय-प्रदीप' नामक ग्रन्थसे उद्धृत अंशके कुछ अंशका श्रील प्रभुपादके निकट पाठकर श्रीविष्णुस्वामी, श्रीरामानुज, श्रीमध्व और श्रीनिम्बार्कके विषयमें कुछ समय चर्चा की।]

शास्त्री—मैं एक बार मायापुर गया था। एक प्रहर गोद्रुममें रहा और उसके बाद मायापुर गया।

श्रील प्रभुपाद—आपने सुना होगा कि श्रीमायापुरमें एक डाकखाना खोला गया है एवं वहाँसे एक दैनिक पारमार्थिक पत्र नियमित रूपसे निकल रहा है। एक पारमार्थिक विद्यापीठ भी प्रतिष्ठित हुआ है।

शास्त्री—प्राचीन नवद्वीपको जितना सुन्दर किया जाएगा, वह हमारे लिए उतने गौरवकी बात है।

श्रील प्रभुपाद—अब श्रीमायापुरमें एक प्रदर्शनी उद्घाटन करनेकी हमारी इच्छा है। यहाँ विविध पारमार्थिक द्रव्य और तथ्यमूलक ग्रन्थादि प्रदर्शित होंगे। श्रीधाम-मायापुर-प्रदर्शनीके एक सदस्यके रूपमें आपको पानेपर हम आनन्दित होंगे।

शास्त्री—आपलोगोंके कार्यमें मेरी पूर्ण सहानुभूति है। मैं अत्यन्त अक्षम हो गया हूँ। इस टूटे पैरको लेकर कहीं भी जा नहीं सकता। मुझे श्रीधाम-मायापुर-नवद्वीप-प्रदर्शनीके सदस्यके रूपमें ग्रहण कर यदि आपलोग आनन्दित होंगे, तो मैं उसके लिए मना नहीं कर सकता। इस प्रकारके महत् कार्यमें किसी भी प्रकारसे योगदान करने पर अपनेको धन्य मानूँगा।

[इसके बाद शास्त्रीजीने अपने द्वारा संगृहीत कुछ हस्तलिखित प्राचीन पोथियाँ श्रीधाम-मायापुर-प्रदर्शनीके लिए देनेका वचन दिया एवं उन्होंने उचित समय पर उन ग्रन्थोंको श्रीधाम-मायापुर-प्रदर्शनीके लिए प्रदान किया।]

श्रील प्रभुपाद—आपने पुष्करासादि लिपिकी कोई पुस्तक देखी है?

शास्त्री—जिसे खरोष्टि कहते हैं?

श्रील प्रभुपाद—नहीं, खरोष्टि पुष्करासादिसे पृथक् है। ब्राह्मी, खरोष्टि, पुष्करासादि और सान्कि—इन चार प्रकारकी लिपियोंकी बात सुनी जाती है।

शास्त्री—पुष्करासादि किस प्रकार लिखी जाती है?

श्रील प्रभुपाद—पुष्करासादि नीचेसे ऊपरकी ओर जाती है।

शास्त्री—मैंने तो ऐसी लिपिमें कोई पुस्तक नहीं देखी है।

श्रील प्रभुपाद—सान्कि लिपिकी गति ऊपरसे नीचेकी ओर होती है। चीन देशकी लिपि वैसी है। ज्योतिषोंने सान्कि लिपिकी पद्धति अपनायी है। टेब्ल्-form में लिखा जाता है।

शास्त्री—पूर्व कालमें ताड़के पत्तेकी पोथी लिखनेके समान लगता है। भूदेव बाबुके पिता इस प्रकार पोथी लिखते थे। अस्सी सालोंसे श्रीरामपुरकी पोथीं इस प्रकार लिखी जाती थी। कोष्ठी-लेखन भी इस प्रकार का है।

श्रील प्रभुपाद—खरोष्टि दायीं ओरसे बायीं ओर।

शास्त्री—'अङ्कस्य वाम्य गतिः।' तब यह खरोष्टि हो जाती है।

श्रील प्रभुपाद—बहुत दिनोंसे आपसे भेंट नहीं हुई है। बेङ्गल(?) ऑफिसमें चालीस साल पहले आपसे भेंट हुई थी।

शास्त्री—इतने दिनोंकी बात आपको स्मरण है? उस समयकी शाक्त-वैष्णवोंके मध्य कलहकी बात याद आ जाती है। वैष्णव शाक्तोंको [उपहासपूर्वक] कहते—'तुमलोग बकरा काटकर मातृ(देवी)हत्या कर रहे हो।' [अर्थात् माँके सामने ही उसकी संतानको काटकर बलि चढ़ा रहे हो। ऐसा करके वास्तवमें माँकी ही हत्या कर रहे हो।] जब कि शाक्तलोग वैष्णवोंको [उपहासपूर्वक] कहते—'हमलोग काष्ठपर रखकर बकरेके चैतन्यको काट रहे हैं। [अर्थात् हम देवीको नहीं, अपितु तुम्हारे चैतन्य महाप्रभुका नाश कर रहे हैं।]

श्रील प्रभुपाद—वह एक बौद्ध-सहजिया-मत है। अचित्से चित्की उत्पत्ति एवं चित्के विनाशकी चेष्टा—बौद्धमतके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है।

शास्त्री—भक्तिविनोद ठाकुरके साथ बहुत कार्य किया है। मेरा और काम क्या था? वे सदैव वैष्णवधर्मकी ही बात करते, विभिन्न स्थानों पर ले जाते। उनके समान वैष्णवधर्म-प्रचारका अदम्य उत्साही और निष्कपट आग्रहयुक्त व्यक्ति मैंने दूसरा नहीं देखा है। उनमें अनेक गुण थे। उनसे बहुत कुछ सिखनेकी भी बातें थीं। उनके लिए 'सत्य' उनके प्राणोंसे भी अधिक प्रिय वस्तु थी। वे कहते—'पृथ्वीके समस्त देशोंके लोग मिलकर जब श्रीचैतन्यदेवका नाम करेंगे, उसी दिन उनका मनोऽभीष्ट पूर्ण होगा। वैष्णवधर्मके सम्बन्धमें उनके विचार और विश्लेषण करनेकी क्षमता देखकर मैं आश्चर्यचकित रह जाता। मैं देख रहा हूँ कि आप उनके ही मनकी अभिलाषाओंको पूर्ण कर रहे हैं। यहाँ मेरे पास कष्ट स्वीकार करके आपको आनेकी क्या आवश्यकता थी? मेरा पैर टूटा है। अन्यथा मैं स्वयं ही आपके पास चला जाता। जैसा भी हो, आपको देखकर मैं विशेष कृतार्थ हुआ हूँ। बहुत दिनों पहलेकी स्मृति आज हृदयमें जाग्रत हो गयी।

[यह कहकर शास्त्रीजी अपने crutch के सहारे उठ खड़े हुए एवं कुछ पग श्रील प्रभुपादके पीछे चलनेकी चेष्टा करने लगे। तब श्रील प्रभुपादने अस्वस्थ शास्त्रीजीको चलनेके लिए मना किया। शास्त्रीजीके भवनके एक व्यक्तिने श्रील प्रभुपाद और शास्त्रीजीके एक दूसरेके निकट बैठे हुए एक फोटो खींच ली।]

[श्रीसरस्वती-संलापसे अनुदित]

श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव
गोस्वामी महाराजका वाणी-वैभव

श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी पत्रावली

(पत्र-१८)

स्त्रियोंके लिए गृहस्थ आश्रम ही कल्याणजनक है, श्रीनामके आश्रयसे ही श्रीहरि-गुरु-वैष्णवोंका दर्शन तथा कृपा प्राप्त होती है

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ,
कंसटीला,
पोः—मथुरा (उः प्रः)
दिः—३०/१/१९६२

स्नेहास्पदेषु—

————! सांसारिक जीवनमें मायामोह अवश्यम्भावी है। स्त्रियोंको संसारमें रहकर ही भगवान्‌के प्रति आसक्ति समर्पण करनी चाहिए। महाजनोंने कहा है—

विषये जे प्रीति एबे आछये आमार।
सेइमत प्रीति हउक् चरणे तोमार॥

[अर्थात् विषयोंमें अभी मेरी जैसी प्रीति है, हे प्रभु! वैसी ही प्रीति आपके चरणोंमें हो।]

इस शिक्षाको सर्वदा ही स्मरण रखना होगा। विधवा स्त्रियोंके लिए पुत्र-कन्या ही आसक्ति और प्रीतिके प्रधान स्थल होते हैं। साधारणतः भावी सुख-शान्तिके लिए पुत्रके प्रति प्रचुर आशा, आकाङ्क्षा की जाती है। तुम अपने पुत्र-कन्याके प्रति कर्तव्यबोधसे उनका पालन-पोषण करना, जिससे वे भी भगवद्भक्तिमें प्रतिष्ठित हो सकें। परन्तु उनके प्रति किसी प्रकारकी आसक्ति या ममता मत रखना। उनके प्रति तुम्हारे मनमें जैसी आसक्ति है, उस आसक्तिको भगवान्‌के प्रति समर्पण करना।

तुमने एक बहुत अच्छी बात लिखी है—"जितने भी दुःख कष्ट हैं, उन सबको इसी जन्ममें ही दे दीजिए।" भगवान्‌से सर्वदा ऐसी ही प्रार्थना करना। तुम्हारा यह विचार मुझे बहुत अच्छा लगा। तुमने अन्तिम समयमें मेरे दर्शनके लिए प्रार्थना की है। दिन-रात श्रीहरि-गुरु-वैष्णवोंकी अपार करुणाका स्मरण करनेपर अन्तिम समयमें क्यों, सर्वदा ही हृदयमें उनके दर्शनको अनुभव किया जा सकता है। 'कीर्तनीयः सदा हरिः'—इसको सर्वदा ही स्मरण रखना। सर्वदा, नहीं तो समय मिलते ही श्रीहरिनाम करना। अपने भजनकी बाधाओंको दूर करनेके लिए सर्वदा ही श्रीनामप्रभुसे निवेदन करते रहना। श्रीनाम समस्त जीवोंकी समस्त प्रकारकी असुविधाओंको दूर करते हैं। अपने पुत्र-कन्याको मेरा आशीर्वाद कहना। इति—

नित्यमङ्गलाकाङ्क्षी—

B. P. Keshava

श्रीभक्तिप्रज्ञान केशव

(श्रीगौड़ीय पत्रिका—वर्ष-४१, संख्या-१२ से अनुदित)

श्रील भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजका वाणी-वैभव

श्रीगौड़ीय-पत्रिकाका अट्ठाईसवाँ वर्ष

अट्ठाईसवें कलियुगमें श्रीगौरसुन्दरके शुभाविर्भावकी वन्दना करते हुए मङ्गलाचरण

श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिका मुखपत्र 'श्रीगौड़ीय-पत्रिका'ने गौड़ीयके उपास्य स्वयं-भगवान् अभिन्न-ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुको क्रोड़ (गोद) में ग्रहण करके अट्ठाईसवें वर्षमें शुभ प्रवेश किया है। भगवान् तीन प्रकारकी मूर्त्तियोंमें अवतीर्ण होते हैं। शक्तिके तारतम्य [प्रभेद] और कार्यके गौरव या चिद्-वैशिष्ट्यके कारण ये तीन प्रकारके भेद हैं, यथा—पुरुषावतार, गुणावतार और लीलावतार। पुरुषावतार तीन प्रकारके हैं, गुणावतार तीन प्रकार हैं एवं लीलावतारोंमें भी तीन भेद हैं—कल्पावतार, मन्वन्तरावतार और युगावतार। शुक्ल, रक्त, श्याम और पीत—ये चार युगावतार हैं। इनमें वैवस्वत मन्वन्तरमें श्याम और पीतका वैशिष्ट्य है।

सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि चारि युग जानि।
सेइ चारियुगे दिव्य एकयुग मानि॥
एकात्तर चतुर्युगे एक मन्वन्तर।
चौद मन्वन्तर ब्रह्मार दिवस-भितर॥
वैवस्वत नाम एइ सप्त मन्वन्तर।
साताइश चतुर्युग गेले ताहार अन्तर॥
अष्टाविश चतुर्युगे द्वापरेर शेषे।
ब्रजेर सहित हय कृष्णेर प्रकाशे॥
युगधर्म प्रवर्त्तामु नाम-संकीर्तन।
चारि भाव भक्ति दिया नाचामु भुवन॥

[सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि—ये चार युग हैं और इन चार युगोंको एक चतुर्युग या दिव्ययुग माना जाता है। एकहत्तर चतुर्युगोंका एक मन्वन्तर होता है। चौदह मन्वन्तरोंका ब्रह्माजीका एक दिवस (या एक कल्प) होता है। इस एक दिनके अन्तर्गत वैवस्वत नामक वर्तमान सप्तम मन्वन्तरमें सताईस चतुर्युगोंके बीत जानेके बाद अट्ठाईसवें चतुर्युगके द्वापरके अन्तमें ब्रजधामके साथ श्रीकृष्णचन्द्र प्रकट-विहार करते हैं। तब वे युगधर्म नाम-सङ्कीर्तनका प्रवर्त्तन करते हैं और चार प्रकारके ब्रजभावोंसे युक्त भक्तिको प्रदानकर सम्पूर्ण विश्वको नाचाते हैं।]

× × × × × ×

आपनि करिमु भक्तभाव अङ्गीकारे।
आपनि आचरि भक्ति शिखामु सबारे॥
युगधर्म-प्रवर्त्तन हय अंश हैते।
आमा बिना अन्ये नारे ब्रजप्रेम दिते॥
एत भावि कलिकाले प्रथम सन्ध्याय।
अवतीर्ण हैला कृष्ण आपनि नदीयाय॥

[श्रीकृष्णने सोचा—मैं स्वयं भक्तभावको स्वीकार करूँगा एवं स्वयं ही भक्तिका आचरण करके सभीको भक्तिकी शिक्षा दूँगा। युगधर्मका प्रवर्त्तन तो मेरे अंश द्वारा ही हो जाता है, किन्तु मेरे बिना अन्य कोई भी ब्रजप्रेम नहीं दे सकता। ऐसा विचारकर कलिकालकी प्रथम सन्ध्यामें श्रीकृष्ण स्वयं ही नदीयामें प्रकट हुए।]

अट्ठाईसवें चतुर्युगमें श्रीकृष्णचन्द्र और श्रीगौरचन्द्रके आविर्भावकी विशेषता

अन्य-अन्य कलियुगोंमें युगावतारोंके द्वारा युगधर्म प्रवर्त्तित होता है, किन्तु श्रीगौरचन्द्र समस्त कलियुगोंमें प्रकटित नहीं होते हैं। ब्रह्माजीके दिन-रात्रिमें वे एक बार ही प्रकट-लीला करते हैं। दो कल्पोंको लेकर एक दिवस-रात्र है, दिवस या सृष्टि [एक कल्पकाल] एवं रात्र या प्रलय-काल [दूसरा कल्पकाल] को दिन-रात्रि कहा जाता है। दिवस-भागकी शेष सन्ध्यामें—श्वेतवराह-कल्पके सप्तम वैवस्वत मन्वन्तरमें अट्ठाईसवें चतुर्युगके द्वापरके अन्तमें ब्रजधामके साथ श्रीकृष्णचन्द्र प्रकट-विहार करते हैं एवं उसी अट्ठाईसवें चतुर्युगके कलियुगकी प्रथम सन्ध्यामें श्रीनवद्वीपचन्द्र प्रकटित होते हैं। इस नियमके अनुसार ही दोनोंका आविर्भाव हुआ है। जिस समय स्वयंरूप प्रकटित होते हैं, उनके साथ समस्त मूर्त्ति और अवतार उनमें मिलित हो जाते हैं। इसीलिए श्रीकृष्ण और श्रीगौराङ्ग दोनों ही स्वयंरूप अवतारी हैं। उनमें-से श्रीगौराङ्गवतारमें मुख्य और गौणके भेदसे कुछ उद्देश्य पूर्ण हुए हैं। श्रीराधिकाके प्रणय-माधुर्यका आस्वादन और प्रेमभक्तिका प्रचार ही मुख्य उद्देश्य हैं। भक्तवात्सल्य, भूभारहरण और युगधर्म-प्रचार आदि गौण प्रयोजनके रूपमें निर्णीत हुए हैं।

कृष्ण और गौर लीलामें श्रीवेदव्यासकी भूमिका

मत्स्यपुराणमें है—*'भारावतारणार्थन्तु त्रिधा विष्णुर्भविष्यति। द्वैपायनो मुनिस्तद्वद्रौहिणेयाथ केशवः॥'* इस वचनमें देखा जाता है, श्वेतवराह कल्पके वैवस्वत नामक सप्तम मन्वन्तरमें अट्ठाईसवें चतुर्युगमें द्वापरके अन्तमें श्रीभगवान् त्रिधामूर्त्ति वेदव्यास, बलराम और केशवके रूपमें भू-भारके हरणके लिए अवतीर्ण हुए हैं। इस कलिमें भी श्रीकृष्णचैतन्यदेवके साथ व्यासदेवरूपमें श्रील वृन्दावन दास ठाकुर आविर्भूत हुए हैं। श्रीगौरगणोद्देश दीपिकामें—*'वेदव्यासो य एवासीत् दासो वृन्दावनोऽधुना'* एवं अनन्तसंहितामें श्रीकृष्णचैतन्य जन्मखण्डमें *'व्यासो वृन्दावनः स्मृतः'* वर्णित है। इसलिए श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामीने भी बताया है—*'कृष्णलीला भागवते कहे वेदव्यास। चैतन्यलीलार व्यास वृन्दावनदास॥'* श्रील वृन्दावनदासने श्रीचैतन्यभागवत ग्रन्थके मङ्गलाचरणमें उनके लीला-परिकर आदि आश्रित-तत्त्व-समन्वित विषय-विग्रह श्रीगौरसुन्दरकी इस प्रकार वन्दना की है—*'नमस्त्रिकालसत्याय जगन्नाथसुताय च। सभृत्याय सपुत्राय सकलत्राय ते नमः॥'* अर्थात् आप त्रिकालसत्य हैं, जगन्नाथमिश्रके सुत (पुत्र) हैं, आपके सेवकरूपी भक्तों, पुत्ररूपी गृहत्यागी गोस्वामी आदि शिष्यों एवं भू-शक्तिस्वरूपा श्रीविष्णुप्रिया, श्री-शक्तिस्वरूपा श्रीलक्ष्मीप्रिया एवं श्रीगदाधर-नरहरि-रामानन्द-जगदानन्द आदि कलत्रों (शक्तियों) सहित आपको पुनः पुनः नमस्कार करता हूँ।

मङ्गलाचरणमें आश्रय-विषय-विग्रहके रूपमें श्रीव्यासगुरु और परतत्त्व श्रीकृष्णका जयगान

प्रारम्भिक सूचनामें विषय-आश्रयकी वन्दना या जयगान—शिष्टाचार अर्थात् सदाचार-सम्मत रीति है। इसलिए पुराणादि शास्त्रोंके भी आदि-मध्य और अन्तमें *'नारायणं नमस्कृत्य नरञ्चैव नरोत्तमम्। देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥'* मङ्गलाचरणके रूपमें लिखित है। कहींपर आश्रय और विषयविग्रहका अलग रूपसे, पुनः कहीं पर मिलित रूपसे जयगान देखनेको मिलता है। श्रीव्यासपूजाके अङ्ग पूजापञ्चक एवं तत्त्वपञ्चककी आराधनामें भी अनुरूप सिद्धान्त देखा जाता है। फिर पृथक् रूपसे कहींपर भगवान् श्रीकृष्णको ही सर्वाश्रय, सर्वधाम, सर्वसेव्य विषयके रूपमें वर्णन किया गया है। *'कृष्ण एक सर्वाश्रय, कृष्ण सर्वधाम', 'एक कृष्ण सर्वसेव्य, जगत्-ईश्वर'* (चै. च. आ.)। श्रील श्रीधरस्वामीने (भा.१०/१/१) पर अपनी भावार्थदीपिका टीकामें लिखा है—*'दशमे दशमं लक्ष्यमाश्रिताश्रय-विग्रहम्। श्रीकृष्णाख्यं परं धाम जगद्धाम नमामि तत्॥'* अर्थात् श्रीमद्भागवतके दशम-स्कन्धमें आश्रितगणोंके आश्रयविग्रह-स्वरूप श्रीकृष्णको लक्ष्य किया गया हैं। उन श्रीकृष्ण नामक परमधाम और जगद्धामको नमस्कार करता हूँ।

श्रीमद्भागवत ही आश्रित और सर्वाश्रय-तत्त्वकी समन्वयकारी

इस निखिलाश्रय दस तत्त्वोंके विषयके रूपमें परमधाम और जगद्धाम स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण हैं, यह भागवतमें ही विशेषरूपसे कहा गया है—

अत्र सर्गो विसर्ग स्थानं पोषणमुतयः।
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधा मुक्तिराश्रयः॥

(भा. २/१०/१)

अर्थात् इस भागवत शास्त्रमें सर्ग, विसर्ग, स्थान, पोषण, उति, मन्वन्तर, ईशकथा, निरोध, मुक्ति और आश्रय—ये दस लक्षण वर्णित हुए हैं।

जगत्में दो तत्त्व हैं—आश्रय और आश्रित। जो समस्त आश्रित तत्त्वोंके मूल हैं, उनको आश्रयकर जो तत्त्व हैं, वे सभी आश्रित हैं। सर्गसे मुक्ति तक नौ आश्रित तत्व हैं। तीनों पुरुषावतार, समस्त अवतार, शक्ति, जीव और जड़जगत् सभी उन कृष्णरूप परमाश्रयके आश्रित हैं। इसलिए श्रीकृष्णके स्वरूप और उनकी तीनों शक्तियों—चित्-शक्ति, जीवशक्ति और मायाशक्तिके सम्बन्धमें परिपूर्ण ज्ञान प्राप्त करनेकी आवश्यकता है। यहाँ श्रीमद्भागवतमें वर्णित दस लक्षणोंकी चर्चा की जा रही है।

"(१) सर्ग—पञ्चमहाभूत, पञ्चतन्मात्रा, दसेन्द्रिय, मन, महत्-तत्त्व और अहङ्कार एवं इन सभीकी विराट्रूपमें और स्वरूपमें जो उत्पत्ति है। (२) विसर्ग—ब्रह्मासे उत्पन्न चराचर सृष्टि। (३) स्थिति—श्रीभगवान्की विजय, सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा और संहारकारी शिवसे उत्कर्ष। (४) पोषण—अपने भक्तोंके प्रति भगवान्का अनुग्रह। (५) उति—कर्मकी वासना। (६) मन्वन्तर—सात्त्विक जीवोंका आचरणीय धर्म। (७) ईशकथा—श्रीहरिकी अवतार-कथा और भागवत-भक्तोंकी कथा। (८) निरोध—श्रीहरिका योगनिद्राके समय स्व-उपाधि-शक्ति सहित शयन। (९) मुक्ति—स्थूल-सूक्ष्म रूप त्यागकर शुद्धजीव-स्वरूपमें अथवा पार्षदरूपमें अवस्थिति। (१०) आश्रय—जिनसे सृष्टि और लय होता है, जिनसे विश्व प्रकाशित होता है, वे प्रसिद्ध परब्रह्म और परमात्मा।"

मनु, मन्वन्तर और चतुर्युगका संक्षिप्त इतिहास

ग्रन्थ-सम्राट् श्रीमद्भागवतमें 'सर्गसे आश्रय' तक जिन दस तत्त्वोंका वर्णन और व्याख्या हुई है, उन सबको ही धर्मशास्त्रकार और संहिताकार वैवस्वतादि मनुगणोंने प्रकाश और प्रचार किया है। प्रत्येक कल्पमें इस प्रकार स्वायम्भुव आदि चौदह मनु होते हैं, अभी सप्तम वैवस्वत मनुका अधिकार है। ७१ चतुर्युगोंका एक मन्वन्तर है एवं यही प्रत्येक

मनुका शासनकाल है। सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि—ये चार युग हैं। (१) वैशाख-मासके शुक्लपक्षकी तृतीया-तिथि रविवारको सत्ययुगकी उत्पत्ति होती है। इस युगका परिमाण १७,२८,००० वर्ष है। इस युगमें मत्स्य, कूर्म, वराह और नृसिंह—ये चार अवतार होते हैं। सभी लोग निरन्तर धर्म-पालनमें रत रहते हैं। इस समयमें पाप नहीं होता, धर्म चतुष्पाद अर्थात् पूर्णरूपसे रहता है। (२) कार्त्तिक-मासकी शुक्ला-नवमी-तिथि पर सोमवारको त्रेतायुगकी उत्पत्ति होती है। इस युगका परिमाण १२,९६,००० वर्ष है। त्रेतामें वामन, परशुराम और श्रीराम—ये तीन अवतार होते हैं। लोग दान-धर्म एवं तपस्यादिमें रत रहते हैं। इस समय पाप एकपाद और पुण्य तीनपाद रहता है। (३) भाद्रमासकी कृष्णा-त्रयोदशी-तिथि पर बृहस्पतिवारको द्वापरयुगकी उत्पत्ति है। इस युगका परिमाण ८,६४,००० वर्ष है। इस युगमें बलराम और बुद्ध—ये दो अवतार होते हैं। मानवगण धर्म और अधर्ममें रत होनेके कारण पाप द्विपाद और पुण्य द्विपाद रहता है। (४) माघ-मासकी पूर्णिमा-तिथि पर शुक्रवारको कलियुगकी उत्पत्ति होती है। इसका परिमाण ४,३२,००० वर्ष होता है। इस युगके अन्तमें कल्कि अवतार होंगे। कलिमें पुण्य एकपाद और पाप त्रिपाद होता है।

क्रमशः

(श्रीगौड़ीय पत्रिका, वर्ष-२८, संख्या-१से अनुदित)

"हाँ, तो मेरा प्रश्न यह है कि आँखे मूँदकर मन्दिरोंमें चुपचाप न बैठकर दीन-दुःखी, भूखे अथवा रोगी मनुष्योंकी सेवा करनेसे, भोजन-वस्त्र और औषधि-पथ्य आदि द्वारा उन्हें सन्तुष्ट करनेसे भगवान्‌की सेवा होती है या नहीं?"—नरेन्द्रने पार्ककी हरी-हरी घासके ऊपर बैठते हुए कहा। उस समय तक चन्द्र अपनी शीतल स्निग्ध चन्दिकाको निस्तब्ध पृथ्वीपर बिखरने लग गया था। वह आगे कहने लगा—"मेरे विचारसे दरिद्र-नारायणकी सेवा ही सर्वश्रेष्ठ सेवा है। मन्दिरोंका निर्माण बन्द रखकर अस्पतालोंके निर्माणसे ही श्रेष्ठतर सेवा हो सकती है।"

"कदाचित् तुम व्यासदेव आदि अभ्रान्त शास्त्रकारों तथा भगवान्‌के शाब्दिक अवतार श्रीमद्भागवत आदि पुराणोंकी अपेक्षा वर्तमानकालके सांसारिक कवियोंकी रचनाओंको अधिक महत्व देना चाहते हो—यही न?" देवेन्द्र भी ऐसा कहते हुए हँसते-हँसते नरेन्द्रकी बगलमें बैठ गया। उसके गलेमें तुलसीकी माला और चौड़े ललाटपर दिव्य तिलकको चन्द्रने अपनी ज्योत्सनाकी झीनी चादरसे ढक दिया था, जिसके भीतरसे उसके मुख-मण्डलकी सात्त्विक आभा झाँक रही थी। उसकी बात थमी नहीं,—"निरपेक्ष होकर विचार करनेसे विषयकी सत्यता उपलब्धि होती है।

दरिद्र-नारायणकी सेवा ?

— श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम गोस्वामी महाराज

मन्दिरमें भगवत् विग्रह क्या वस्तु है? भगवान्‌की सेवा क्या वस्तु है?—इन विषयोंको जो नहीं समझता, वही ऐसे अपराधयुक्त विचारोंको प्रकाश कर सकता है और उसे ही ठीक मानकर प्रचार करता है। तनिक विचारोंकी गहराईमें प्रवेश करना सीखो। जिनका हृदय रजोगुण ओर तमोगुणसे ढका हुआ है, और जिनमें सत्वगुगणका लेश भी नहीं है, ऐसे तामसिक कर्मीलोग भक्तिका माहात्म्य उपलब्धि नहीं कर पाते हैं। ये लोग केवल अपने इन्द्रिय सुखोंकी कामनाओंको और भोगवादको भगवद्भक्तिकी आड़में चलाना चाहते हैं।

"इन्द्रिय-सुख दो प्रकारका होता है—व्यक्तिगत और समाजगत। केवल एक व्यक्तिके सुखको व्यक्तिगत-सुख कहते हैं तथा सारे समाजके लोगोंके सुखको समाजगत-सुख कहते हैं। इन्द्रिय-सुखका अर्थ बाह्य-विषय सुखसे है, जिससे हमारी इन्द्रियोंको सुख मिलता है। तुम्हारा विचार सीधा समाजगत-इन्द्रिय-सुखको लक्ष्य करता है। मैं समाजकी उपेक्षा करनेके लिए नहीं कह रहा हूँ, बल्कि उसकी रक्षा करना ही हमारा कर्त्तव्य है। किन्तु हमारा समाज कैसा होना चाहिए, समाज-संरक्षणका अर्थ क्या है, उसकी कैसे रक्षा की जाय—इन विषयोंकी जानकारी न होनेसे कल्याण होनेके बदले अकल्याण ही प्राप्त होता है। पाश्चात्य देशोंकी नकलकर भारतीय समाजका गठन करनेका उद्देश्य भौतिक नश्वर सुखोंके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। इसके द्वारा पराशान्ति अर्थात् भगवद्भक्ति प्राप्त नहीं हो सकती।

"हमारे प्राचीन ऋषियोंने जिस प्रकार समाजके संरक्षणकी व्यवस्था की है, उसका प्रधान लक्ष्य पराशान्ति है। उन्होंने केवल जागतिक सुखमात्रके लिए समाजकी व्यवस्था नहीं की है। परन्तु उन्होंने एक ऐसे समाजकी व्यवस्था की है—उसके संरक्षणके नियम बनाए हैं, जो समाज लोगोंको भगवद्भक्ति प्राप्त करानेमें सहायक हो—उसके अनुकूल हो। किन्तु उस समाजसे जिसमें भगवद्भक्तिकी बातें नहीं, जिसमें केवल लौकिक भोगोंकी बातें ही भरपूर हैं, जीवोंके मङ्गल और शान्तिकी आशा करना मरीचिकासे जलकी आशा करना है। कारण—भगवद्भक्तिके अतिरिक्त लौकिक अथवा पारलौकिक सभी वस्तुएँ नश्वर और अमङ्गलजनक हैं। आवश्यकतानुसार भोजन-वस्त्रकी समस्याको हल करते हुए शरीरकी रक्षा करना आवश्यक हैं; किन्तु शरीर रक्षाका मूल उद्देश्य भगवान्‌की सेवा होना ही उचित है।

"यहाँ तुम कह सकते हो—पहले शरीरकी रक्षा न होनेसे भगवान्‌की सेवा कैसे हो सकती है? हमारे देशके लोग भूखे हैं, दाने-दानेको तरसते हैं, पहननेको कपड़े नहीं, पढ़नेको शिक्षाकी उचित व्यवस्था नहीं, मरीजोंके लिए पर्याप्त अस्पताल नहीं, हमारे पास आधुनिक जगत्‌के साथ कदमसे कदम मिलाकर चलनेके लिए वैज्ञानिक सुविधाएँ नहीं,—अतः इस समय मन्दिरोंमें भगवान्‌की सेवा बन्द रखनेकी आवश्यकता है। इसके उत्तरमें मैं तुमसे पूछता हूँ—मान लो, एक सती-साध्वी नारी है। वह सर्वदा तन, मन, धनसे अपने पतिदेवकी सेवा करती है। एक दिन जो कुछ संग्रह हुआ, उससे केवल एक जनका ही पेट भर

सकता था। अब इस समय उसका क्या कर्त्तव्य है? क्या पत्नी यह कहेगी कि वह तो पतिकी सेवा करती है, अतः पहले उसके ही (स्त्रीके) आहार-विहारकी आवश्यकता है। पहले वह (स्त्री) भोजन कर ले और पतिदेव उस समय भूखें रहें। अथवा क्या वह स्वयं उपवास रखकर अपने प्राणप्रिय पतिदेवको समस्त भोजन करायेंगी? भाई साहब, सेवा एक ऐसी मधुर और महान क्रिया है जिसमें भूख और प्यास अथवा कोई भी जागतिक अभाव बाधा नहीं डाल सकता है। सेवा आत्माकी वृत्ति है। इस वृत्तिके उदित होनेसे ही सेवा करनेका सामर्थ्य प्रकाशित होता है। अत्यन्त दरिद्र व्यक्तिका भी सेवामें पूर्ण अधिकार है। गीताजीमें भगवान् कहते हैं—

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः।।

(गीता ९/२६)

अतएव जिनके घरमें सेवाकी कुछ भी वस्तु न हो, यदि वे तुलसीके पत्तेके साथ एक अञ्जली जल भी श्रद्धापूर्वक भगवान्‌को अर्पण करें, तो वे भगवत् अनुग्रह पा सकते हैं। दरिद्रता भक्तिके पालनमें बाधा उत्पन्न नहीं करती, अपितु बाधा उत्पन्न करता है अबोध मन।

"अपनी इन्द्रियोंको चरितार्थ करनेके लिए मन्दिरमें श्रीविग्रहकी सेवाको बन्द करना चरम नास्तिकता है। स्वयं भगवान् और हमारे ऋषियोंने दरिद्र और दुःखी व्यक्तियोंकी सहायता करनेके लिए विधान दिया है। 'दरिद्रान भर कौन्तेय' आदि वचन शास्त्रोंमें देखे जाते हैं तथा ऐसे कर्मोंसे चित्त क्रमशः उदार होता है। किन्तु 'भगवान्‌की सेवा और दरिद्रोंकी सेवा एक वस्तु हैं—हमारे शास्त्रोंमें ऐसा कहीं नहीं कहा गया है। भगवान् अधोक्षज वस्तु हैं, वे अप्राकृत तत्त्व हैं—इन्द्रियोंसे परे हैं और दरिद्र-व्यक्ति जड़-मायाके गुणोंके अधीन एक बद्धजीव है। भगवान् मायाधीश है और दरिद्र-व्यक्ति मायाबद्ध रज और तमोगुणका प्रकाश है। अतः दोनोंको किस विचारसे एक किया जा सकता है? नारायण—लक्ष्मीके पति हैं, वे अनन्त ऐश्वर्यके मालिक हैं। उन्हें भोजन और वस्त्रका अभाव किसी कालमें नहीं होता, क्योंकि लक्ष्मीदेवी सर्वदा उनके श्रीचरणकमलोंमें लोटती रहती हैं। भला उनके लिए दरिद्रता कैसे सम्भवपर हो सकती है? अतएव 'दरिद्र नारायण' एक अशास्त्रीय, सिद्धान्त-विरुद्ध और अयुक्तियुक्त बात है। वह आकाश-कुसुमकी भाँति एक कोरी कल्पना है।"

"क्या तुम कहना चाहते हो कि मनुष्यके भीतर भगवान् नहीं हैं? यदि प्रत्येक मनुष्यके भीतर भगवान् वास करते हैं, तब मनुष्यकी सेवा द्वारा क्या भगवान्‌की सेवा नहीं होती?"—नरेन्द्रने अपनी बातोंपर बल देते हुए पूछा।

इसपर देवेन्द्रने कहा—"भैयाजी, मनुष्यके भीतर भगवान् हैं, यह तो सत्य है; परन्तु मनुष्य भगवान् नहीं है। मनुष्यके शरीर और मनकी बात तो दूर रहे उसकी आत्मा भी भगवान् नहीं है। मनुष्यके शरीर और मन दोनों उसकी आत्माके आवरण हैं। ये दोनों जड़ हैं। जड़ वस्तुओंको सुख देनेसे भगवान्‌की सेवा नहीं होती। कारण—भगवान् पूर्ण चेतन हैं। अचेतन अर्थात् जड़की सेवासे भगवान्‌की सेवा नहीं होती। तुम केवल दरिद्र व्यक्तियोंको नारायण मानकर सेवा करते हो। परन्तु धनी व्यक्तियोंको भी नारायण मानकर धनी व्यक्तियोंकी सेवा क्यों नहीं करते? क्या उनमें भगवान् नहीं हैं? क्या धनी व्यक्ति मनुष्य नहीं हैं? एक बात और—भगवान् केवल मनुष्य देहमें ही वास नहीं करते, वे तो कीट, पतङ्ग, पशु, पक्षी, मछली, मुर्गी, बकरी, गाय आदि प्रत्येक प्राणीकी देहमें वास करते हैं। फिर इन जीव-जन्तुओंकी हत्याकर, उनका मांस खाकर केवल दरिद्रको एक दिन खिचड़ी खिलानेसे ही क्या नारायणकी सेवा हो जाती है? अरे मित्र! दरिद्र-नारायणकी सेवाके लिए तो तुम्हारे प्राण इतने व्याकुल हैं,

किन्तु बछड़ा-नारायण, भेड़-नारायण, मछली-नारायण, मुर्गा-नारायण तथा गाय-नारायणके प्रति तुम इतने निष्ठुर क्यों बन गए हो? उनकी हत्या करनेमें क्या तुम्हारे हाथ भी नहीं काँपते? यदि दरिद्र-नारायण तुम्हारे इतने प्रिय हैं तो स्वयं अच्छे-अच्छे बङ्गलोंमें, उत्तम आसनोंपर बैठकर पूड़ी, कचौड़ी, लड्डू, खीर, मालपुआ आदि माल उड़ाते हो और अपने परमपूज्य दरिद्र-नारायणजीको गन्दे रास्तोंपर बैठाकर खिचड़ी आदि क्यों खिलाते हो? यह कहाँका विचार है? धन्य हो तुम और धन्य है तुम्हारी दरिद्र-नारायणकी भक्ति। हाय! हाय!! कलिकाल है न, इसीलिए आजकल तुम्हारी ही विजय-डङ्का सब ओर बज रही है। तुम लोग अस्पताल और स्कूल खोलकर सेवाकी बहादुरी लूटना चाहते हो, किन्तु मैं देखता हूँ—यदि अस्पताल और स्कूल खोलना ही श्रेष्ठ साधुता है, तो हमारी सरकार तो ऐसे-ऐसे कामोंको यथेष्ट परिणाममें कर रही है। अतएव भाई, ऐसी कपटता करनेका क्या प्रयोजन है? अपने-अपने पापोंके लिए ही जीव दरिद्र घरमें पैदा होकर कष्ट पाता है। दीन-दुखियोंकी सहायता हमें अवश्य करनी चाहिए। यह पुण्यजनक कर्म है। किन्तु उन्हें नारायण सजानेसे अनन्त अपराध ही होता है।"

नरेन्द्रने प्रतिवाद करते हुए कहा—"क्यों, तुमलोग भी तो सभी वस्तुओंमें भगवान्‌का दर्शन करते हो। अक्रूरने सर्वत्र भगवन्‌का दर्शन किया था। गीता और श्रीमद्भागवतमें भी सर्वत्र भगवत्-दर्शनका वर्णन है—

सर्वभूतेषु यः पश्येद्भगवद्भावमात्मनः।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः॥

(श्रीमद्भा. ११/२/४५)

देवेन्द्रने उत्तर दिया—"वैष्णवलोग सभी वस्तुओंमें भगवद्दर्शन करते हैं—इसका अर्थ यह नहीं कि वह सभी वस्तुएँ भगवान् हैं। वे समस्त वस्तुओंको अपने उपास्य भगवान् श्रीविष्णुसे सम्बन्धयुक्त दर्शन करते हैं। उन वस्तुओंको भगवान्‌की सेवाके उपकरणरूपमें दर्शन करते हैं तथा उससे अपने आराध्यदेवकी सेवा करते हैं। महाभागवत समस्त वस्तुओंमें अपने आराध्य भगवान्‌का अधिष्ठान दर्शन करते हैं तथा उनके दर्शनमें कोई भी वस्तु भगवान्‌से स्वतन्त्र नहीं होती है। प्रह्लादजीने स्तम्भ(खम्बे)के भीतर अपने आराध्यदेवका दर्शन किया था, किन्तु उन्होंने स्तम्भको ही अपना आराध्यदेव नहीं बतलाया और न ही स्तम्भकी पूजा की। उन्होंने सर्वत्र सभी वस्तुओंमें अपने भगवान्‌को विराजमान देखा था। परन्तु, हिरण्यकशिपुने उनके भावको न समझकर स्तम्भको ही विष्णु मानकर उसे चकनाचूरकर विष्णुको ध्वंस करनेकी चेष्टा की थी। किन्तु, नृसिंदेवका तो बाल भी बाँका न हुआ। जैसे स्तम्भके ध्वंस होनेपर भी नृसिंहदेवका ध्वंस नहीं हुआ, वैसे ही स्तम्भकी सेवा द्वारा भी नृसिंहदेवकी सेवा नहीं होती। सीधी बात यह है कि आधार और आधेय एक वस्तु नहीं हैं। 'घड़ेमें जल है'—कहनेसे जैसे घड़ा और जल एक ही वस्तु नहीं हैं, वैसे ही मनुष्यमें या प्राणीमात्रमें भगवान् हैं—कहनेसे प्रत्येक प्राणी या मनुष्य भी भगवान् नहीं हो सकते अथवा सभी वस्तुओंको भगवान् मानना नितान्त मूर्खता है। वस्तु आधार है और भगवान् आधेय हैं—दोनों कभी एक नहीं हो सकते।"

"अच्छा, यदि मनुष्यकी सेवा द्वारा भगवान्‌की सेवा नहीं होती तो तुमलोग साधु-वैष्णवोंकी सेवा क्यों करते हो?"—नरेन्द्रने पुनः प्रश्न किया।

देवेन्द्रने कहा—"हमलोग वैष्णवोंकी, सन्तोंकी सेवा करते हैं—यह बिलकुल सत्य है, किन्तु वैष्णवोंको हमलोग विष्णुके पर्याय(श्रेणी)में गणना नहीं करते। हम उन्हें विषयजातीय भोक्ता अर्थात् भगवान् नहीं मानते। हाँ, वैष्णव भगवान्‌के अत्यन्त प्रिय होते हैं, यहाँ तक कि भगवान्‌ने अपने श्रीमुखसे कहा है—'मैं उन लोगोंके प्रति उतना प्रसन्न नहीं होता जो मेरी सेवा करते हैं, जितना उन लोगोंके प्रति, जो मेरे भक्तोंकी सेवा करते हैं।' बद्धजीव वैष्णवोंकी

सेवा करते हैं—यह तो दूर रहे, स्वयं भगवान् भी वैष्णवोंकी सेवा करके तृप्त नहीं होते। भक्त भगवान्‌के कितने प्रिय हैं, वे उद्धवसे स्वयं कहते हैं—

न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः।
न च सङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा न यथा भवान्।।

(श्रीमद्भा. ११/१४/१५)

अर्थात् हे उद्धव! ब्रह्मा, सङ्कर्षण, लक्ष्मी या स्वयं अपने आप मैं भी मुझे उतना प्रिय नहीं हूँ, जितना तुम मेरे प्रिय हो।

और भी—**'मद्भक्तपूजाभ्यधिका सर्वभूतेषु मन्मतिः।।'**

यहाँ भी भगवान् अपने भक्तोंकी श्रेष्ठता बतला रहे हैं। पद्मपुराणमें शिवजीने अपनी प्रिया पार्वतीजीको इसी तत्त्वका उपदेश दिया है—

आराधनानां सर्वेषां विष्णोराराधनं परम्।
तस्मात् परतरं देवि तदीयानां समर्चनम्।।

श्रीमद्भागवतमें और भी कहा गया है—

महत्सेवां द्वारमाहुर्विमुक्तेः तमोद्वारं योषितां सङ्गिसङ्गम्।।

(श्रीमद्भा. ५/५/२)

'महत् व्यक्तियोंकी अर्थात् साधु-वैष्णवोंकी सेवा करना सभीका कर्त्तव्य है। इससे परामुक्ति अर्थात् प्रेमभक्ति लाभ होती है और विषयभोगोंमें आसक्त व्यक्तियोंकी सेवा करनेसे तमोद्वार अर्थात् नरकमें सदाके लिए पतन हो जाता है। इसलिए [दरिद्र] बद्धजीवको भोजन-वस्त्र आदिका दान करना और साधु-वैष्णवोंकी सेवा करना—इन दोनोंको समान समझना, अथवा दरिद्रोंकी सहायताको नारायणकी सेवा मानना चरम नास्तिकता है।"

नरेन्द्रने अपनी घड़ीकी ओर देखते हुए कहा—"ओह! रात्रिके दस बज गये। तुम्हारी बातें बड़ी युक्तिपूर्ण और शास्त्रसम्मत हैं। अब मैं समझ गया की दरिद्र नारायणकी सेवा और भगवान्‌की सेवा एक नहीं है। चलो, फिर किसी दिन मिलेंगे।" वह उठ खड़ा हुआ और चल पड़ा।

[श्रीभागवत-पत्रिका वर्ष-४०, संख्या-(३-४)से संग्रहीत]

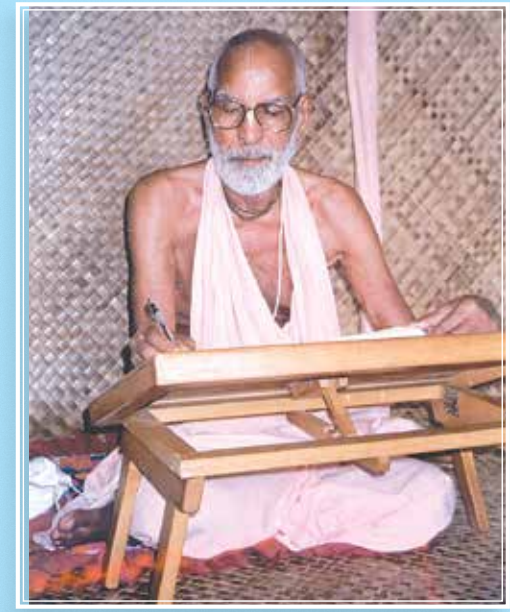

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
मथुरा-२८१००१ (उ.प्र.)
दिनांक ४/१२/१९९७

बेटी मधु,

मेरा स्नेहाशीर्वाद ग्रहण करना। तुम्हारा प्रबन्ध एवं पत्र मिले। टेलीफोन पर बात भी हुई। प्रबन्ध पढ़ा, किन्तु उसकी प्रारम्भिक गुरु-प्रशस्ति सम्पूर्णतः कवियोंकी कल्पना जैसी प्रतीत हुई। केवल इतना ही नहीं, तुम्हारे लिए गुरुकी प्रशस्ति भले ही जान पड़े, किन्तु मैं पत्रिका सम्पादक और साधारण साधक हूँ। सम्पादक होकर भी ऐसी काल्पनिक प्रशस्ति अपने लिए प्रकाशित करना मृत्युके समान होगी। केवल मृत्यु ही नहीं, अपितु महाभागवत भगवत्-अवतारों एवं मुक्त महापुरुषोंके श्रीचरणोंमें अपराधका आह्वान करना होगा। श्रील अद्वैताचार्य भगवान्‌के अवतार हैं, श्रील शुकदेव गोस्वामी, श्रीनारद गोस्वामी, श्रीस्वरूप दामोदर, राय रामानन्द,

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके पत्रामृत

(पत्र–७)

अपने लिए काल्पनिक प्रशंसा प्रकाशित करना मृत्युके समान

सार्वभौम भट्टाचार्य आदि जिन नामोंका उल्लेखकर तुमने उनकी समतामें मुझे बिठलानेकी चेष्टा की है, इसे यदि प्रकाशित करूँ, तो सारा वैष्णव समाज मुझे धिक्कार देगा तथा मुझे भी आत्मग्लानि होगी। अतः मैंने उसमें कुछ संशोधन करनेके लिए कह दिया है।

किन्तु तुम्हारा शेष प्रबन्ध अत्यन्त उपादेय हुआ है। उसे मैंने संशोधनके साथ प्रकाशित करनेके लिए कहा है।

मैं श्रीश्रीराधागोविन्दयुगलसे प्रार्थना करता हूँ कि वे कृपाकर तुम्हें वैष्णव-सिद्धान्तमें प्रतिष्ठित करें, जिससे तुम मेरी मनोऽभीष्ट सेवा—शुद्ध-वैष्णव-साहित्यका प्रचार-प्रसार कर सको। पत्रिकाके लिए गौड़ीय-वैष्णव-सिद्धान्तके अनुरूप प्रबन्ध लिखकर भेजना।

यदि हो सके तो अभी प्रकाशित श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरकी टीका समन्वित हिन्दी संस्करण गीताके लिए कुछ प्रशस्ति लिखकर भेजना। हमलोग श्रीभागवत-पत्रिकामें इस संस्करणके सम्बन्धमें विद्वत् जनोंका अभिमत—स्तम्भमें प्रकाशित करेंगे। यदि सम्भव हो, तो बम्बईके किसी राष्ट्रस्तरीय विद्वान्से इस टीकाके सम्बन्धमें उनका अभिमत लिखवाकर भेजना। इसे भी हम प्रकाशित करेंगे। यदि कोई बम्बई जायेगा, तो उसके हाथों कुछ प्रतियाँ तुम्हारे यहाँ भेज दूँगा। तुम उन्हें ये प्रतियाँ समर्पित कर उनका अभिमत लेना। बेटी सपना, रमेशजी एवं परिवारके सभीको मेरा शुभाशीष कहना। भक्तिरसामृतसिन्धुका बचा हुआ भाग भी पूर्ण कर भेज देना। इति।

तुम्हारा नित्य मङ्गलाकाङ्क्षी

Swami B.V. Narayana

श्रीभक्तिवेदान्त नारायणं

सम्पादकीय निवेदन: श्रीश्रीभागवत-पत्रिकाके सहृद पाठकोंसे विनम्र निवेदन है कि यदि आपमें-से किसीके पास श्रील गुरुदेव—श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके द्वारा हिन्दी अथवा बङ्गला भाषामें लिखित पत्र हैं, तो कृपया उस पत्र//पत्रों को scan करवाकर अथवा उनकी स्पष्ट photo लेकर bhagavata.patrika@gmail.com पर e-mail करें या ७८९५९३९३१६ no. पर whatsapp करें। हम श्रील गुरुदेवके द्वारा आपको भेजे गए पत्रोंको श्रीश्रीभागवत-पत्रिकामें क्रमशः प्रकाशित करेंगे।

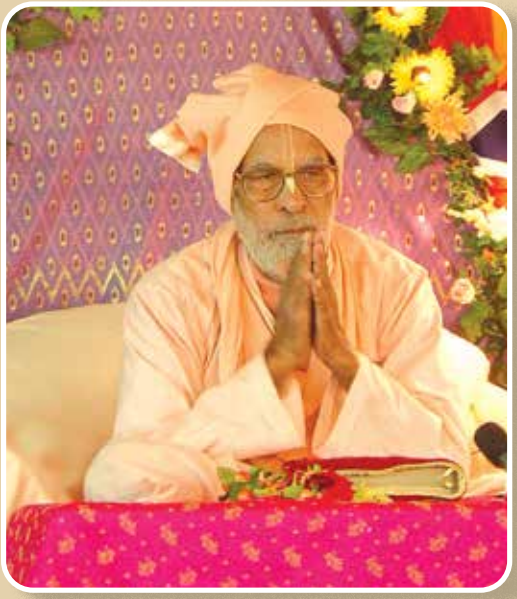

आम्नाय–विवृत्ति

[ब्रह्म–माध्व–गौड़ीय सम्प्रदायका विवरण]

—श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

[द्वारा श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी
६७वीं शुभ–आविर्भाव तिथिके अवसरपर
वर्ष १९६४ई. में लिखित आन्तरिक–श्रद्धा–पुष्पाञ्जलि]

आम्नाय अथवा सम्प्रदाय

विश्वकर्त्ता ब्रह्मासे गुरु–परम्पराके माध्यमसे प्राप्त 'ब्रह्मविद्या' नामक श्रुतियोंको आम्नाय कहते हैं। यह श्रुतिविद्या या आम्नाय–वाणी जिस गुरु–परम्पराकी धारासे जगत्में प्रवाहित होती है, उसे 'आम्नाय–धारा' या 'सम्प्रदाय–धारा' कहते हैं। अमरकोषमें 'आम्नाय' और 'सम्प्रदाय'—पर्यायवाची शब्द उल्लिखित हुए हैं। भरत मुनि(?) भी कहते हैं—"गुरु–परम्परागत सदुपदेशः शिष्ट–परम्परावतीर्णोपदेशः सम्प्रदायः। अर्थात् गुरु–परम्परासे प्राप्त सदुपदेश अथवा वेद–अनुगत परम्परामें अवतीर्ण उपदेशसमूह ही सत्सम्प्रदाय हैं। जिससे सम्यक् रूपसे भगवत्तत्त्वका ज्ञान प्राप्त हो, उसे ही सत्सम्प्रदाय कहते हैं।"

आम्नाय–वाणी

श्रुतिविद्या या आम्नाय–वाणीके मूल प्रकाशक हैं—सृष्टि, स्थिति और प्रलयके मूलकर्ता, सर्वकारणकारण, अचिन्त्यसर्वशक्तिमान स्वयं–भगवान् श्रीकृष्ण। श्रीकृष्णके अंशांश पुरुषावतार—परमेश्वरके निःश्वाससे यह श्रुतिविद्या प्रकटित है—

"अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदाथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि सर्वाणि निःश्वसितानि।"—(बृहदारण्यक २/४/१०)

अर्थात् पुरुषावतार परमेश्वरके निःश्वाससे ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्व–अङ्गिरस* नामक चारों वेद, इतिहास, पुराण, विद्या, उपनिषद्, श्लोक, सूत्र और अनुव्याख्या—ये सभी प्रकटित हैं।

यहाँ **इतिहास**—रामायण, महाभारत आदि; **पुराण**—श्रीमद्भागवत आदि १८ पुराण और १८ उपपुराण; **उपनिषद**—ईश, केन आदि ग्यारह उपनिषद, **श्लोक**—ऋषियों द्वारा रचित अनुष्टुप आदि छन्दग्रन्थ; **सूत्र**—प्रधान–प्रधान तत्त्वाचार्यों द्वारा रचित ब्रह्मसूत्र आदि वेदार्थसूत्रसमूह और **अनुव्याख्या**—आचार्यों द्वारा रचित उपरोक्त सूत्रोंके भाष्यसमूह हैं। ये समस्त विद्याएँ ही 'आम्नाय' शब्दके अन्तर्गत हैं। [श्रीचैतन्य महाप्रभुके मतानुसार] इन सबमेंसे श्रीमद्भागवत ही अमल प्रमाण है।

---

* अथर्ववेद मुख्यतः अथर्वन एवं अङ्गिरस नामक दो ऋषियों द्वारा सूत्रबद्ध किया गया था, इसी कारण इसका प्राचीन नाम अथर्वाङ्गिरस है।

आम्नाय वाणीकी नित्यता

प्रलयके समय यह वेदवाणी लुप्त हो जाती है, तथा सृष्टिके प्रारम्भमें स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ब्रह्माजीको पुनः उसका उपदेश करते हैं।

"कालेन नष्टा प्रलये वाणीयं वेदसंज्ञिता।
मयादौ ब्रह्मणे प्रोक्ता यस्यां धर्मो मदात्मकः॥"

श्रीमद्भागवतम् (११/१४/३)

"तेन प्रोक्ता स्व पुत्राय मनवे" इत्यादि तथा

एवं प्रकृतिवैचित्र्याद्भिद्यन्ते मतयो नृणाम्।
पारम्पर्येण केषाञ्चित् पाषण्डमतयोऽपरे॥

(श्रीमद्भागवतम् ११/१४/८)

अर्थात् श्रीकृष्ण कह रहे हैं—'हे उद्धव! वेदवाणी नित्य है। उसे मैंने सर्वप्रथम ब्रह्माको सुनाया था। उसमें मेरे स्वरूपनिष्ठ विशुद्ध-भक्तिरूप आत्मधर्मका वर्णन है। यह वेदवाणी काल प्रभावसे जब प्रलयके समय लुप्त हो जाती है, तब सृष्टिके प्रारम्भमें मैं पुनः उसका उपदेश सबसे पहले ब्रह्माको करता हूँ। ब्रह्मा उसका उपदेश अपने पुत्र मनु आदिको करते हैं। तदनन्तर परम्परा द्वारा उस विद्याको देवता, ऋषि, मनुष्य आदि प्राप्त करते हैं। उद्धव! जो लोग ब्रह्मासे गुरु-परम्पराके माध्यमसे इस वेदवाणीको यथार्थ अर्थोंके सहित प्राप्त करते हैं, वे विशुद्धमत ग्रहण करनेवाले हैं। इसके विपरीत जो उपरोक्त गुरु-परम्पराकी अवहेलनाकर स्वतन्त्ररूपसे मत-मतान्तरोंका प्रवर्तन आदि करते हैं, वे नाना प्रकारके अशुद्ध मतोंके आश्रित हो पड़ते हैं।'

आम्नाय विचारधारामें निष्णात चार वैष्णव-सम्प्रदाय तथा उनसे प्रकटित शाखा-सम्प्रदाय

"सम्प्रदाय विहीना ये मन्त्रास्ते विफला मताः।
अतः कलौ भविष्यन्ति चत्वारः सम्प्रदायिनः॥
श्रीब्रह्मरुद्रसनका वैष्णवाः क्षितिपावनाः।
चत्वारस्ते कलौ भाव्या ह्युत्कले पुरुषोत्तमात्॥"

(पद्मपुराण)

अर्थात् सम्प्रदाय-प्रणालीसे बहिर्भूत मन्त्रादि (उपासना पद्धतियाँ) कभी भी फलप्रद नहीं होते अर्थात् व्यर्थ माने जाते हैं। इसी कारण कलिकालमें श्री, ब्रह्म, रुद्र तथा सनक—इन चार सात्वत् सम्प्रदायोंके वैष्णव-आचार्यगण पृथ्वीको पवित्र करनेवाले होंगे। ये वैष्णव-आचार्यगण उत्कलदेशमें विराजमान भगवान् श्रीपुरुषोत्तमकी प्रेरणासे ही अपने प्रभावका विस्तार करेंगे—ऐसा जानना होगा।

कलियुगमें (१) श्री अर्थात् लक्ष्मीने श्रीरामानुजाचार्यको, (२) जगद्गुरु ब्रह्माने श्रीमध्वाचार्यको, (३) श्रीरुद्रने श्रीविष्णुस्वामीको तथा (४) श्रीसनकादिने श्रीनिम्बादित्यको अपने-अपने सम्प्रदायके प्रतिनिधिके रूपमें स्वीकार किया है। उपरोक्त चारों साम्प्रदायिक आचार्योंके पश्चात् उन-उन सम्प्रदायोंसे कुछ-कुछ विशेषताओंके कारण एक-एक शाखा-सम्प्रदाय भी प्रवर्तित हुए हैं; जैसे (१) श्री-रामानुज सम्प्रदायमें—रामानन्दी सम्प्रदाय (२) ब्रह्म-माध्व सम्प्रदायमें—गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदाय (३) रुद्र-विष्णुस्वामी सम्प्रदायमें—वल्लभ-सम्प्रदाय तथा (४) सनक-निम्बादित्य सम्प्रदायमें—निम्बार्क सम्प्रदाय। ये शाखा-सम्प्रदाय मूल सम्प्रदायसे सम्बन्धित होते हुए भी उनकी अवहेलना न कर सिद्धान्त एवं उपासना आदिके सम्बन्धमें अपना-अपना वैशिष्ट्य रखते हैं।

विष्णुशक्ति अथवा विष्णुदासोंके द्वारा ही सम्प्रदायका प्रवर्त्तन

प्राचीन इतिहासपर विचार करनेसे ऐसा देखा जाता है कि विष्णुशक्ति या विष्णुदासोंके द्वारा ही सम्प्रदाय-प्रवर्त्तनका कार्य साधित होता है।

"*धर्मं तु साक्षात् भगवत् प्रणीतं*" [धार्मिक सिद्धान्तोंका प्रणयन भगवान् द्वारा स्वयं ही किया जाता है।] (श्रीमद्भागवतम् ६/३/१९), "*धर्मो जगन्नाथात् साक्षान्नरायणात्*" [जगत्के स्वामी साक्षात् नारायणके द्वारा ही धर्मकी स्थिति है।] (महाभारत शान्तिपर्व ३४७/५४) तथा "*धर्ममूलं हि भगवान्*" (श्रीमद्भागवतम् ७/११/७) [सनातन धर्मका मूल

भगवान् ही हैं।]—यद्यपि उपरोक्त शास्त्रीय वचनोंके द्वारा श्रीभगवान्‌को ही सनातन धर्मका मूल स्थिर किया गया है, फिर भी "*अकर्ता चैव कर्ता च कार्यं कारणमेव च*" [वे अविनाशी पुरुष नारायण ही अकर्ता, कर्ता, कार्य तथा कारण हैं।] (महाभारत शान्तिपर्व ३४८/६०) और "*नेत्थंभावेन हि परं द्रष्टुमर्हन्ति सूरयः*" [तत्त्वदर्शी शुद्धभक्तोंको केवल विश्व स्रष्टा आदि रूपमें ही भगवान्‌का दर्शन नहीं करना चाहिए, अर्थात् मूल रूपमें विश्वस्रष्टा होने पर भी विश्व सृष्टिके कार्यमें भगवान्‌का साक्षात कर्तृत्व नहीं होता। भगवान्‌की इच्छाके अनुरूप विश्वकी सृष्टिका कार्य उनकी शक्ति, उनके दासों इत्यादिके द्वारा ही किया जाता है।] (श्रीमद्भागवतम् २/१०/४५) आदि शास्त्र प्रमाणोंके अनुसार यह विचार भी प्रमाणित होता है कि यद्यपि सर्वकारणकारण श्रीभगवान् ही धर्मके मूल हैं, तथापि सम्प्रदाय-प्रवर्त्तनके कार्यमें उनका साक्षात् कर्तृत्व नहीं होता। वे अपनी शक्ति या शक्त्याविष्ट पुरुषोंके द्वारा ही इस कार्यको साधित करते हैं।

ब्रह्म-सम्प्रदाय ही आदि सम्प्रदाय है

उपरोक्त चारों सात्वत् सम्प्रदायोंमें-से ब्रह्म-सम्प्रदाय ही सबसे पहला आदि सम्प्रदाय है, जिसके प्रवर्तक स्वयं ब्रह्माजी हैं। श्रीमद्भागवतमें "*कालेन नष्टा*" (११/१४/३) के द्वारा इसी तथ्यकी पुष्टि होती है। पुनः ब्रह्माजीने सर्वप्रथम अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वाको इस ब्रह्म-विद्याका उपदेश किया—

"ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव
विश्वस्य कर्ता भवुनस्य गोप्ता।
स ब्रह्मविद्या सर्वविद्या
प्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्राहः॥"

(मुण्डक १/१/१)

[विश्वकर्ता भुवनपालक आदि देव ब्रह्माने अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वाको सभी विद्याओंके आधार स्वरूप ब्रह्मविद्याकी शिक्षा प्रदान की थी।]

उपरोक्त श्रुति-पुराण-मन्त्रोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्म-सम्प्रदाय सृष्टिके प्रारम्भ कालसे ही प्रचलित है। कुछ अर्वाचीन [नवीन] व्यक्ति धार्मिक असहिष्णुताके कारण सनक-सम्प्रदायको ही आदि एवं सर्व-प्राचीन सम्प्रदाय बतलाते हैं। परन्तु यह सोचनेकी बात है कि सनकादि कुमार, ब्रह्माजीके मानस पुत्र हैं। ये कुमार पहले-पहले ब्रह्मवादी थे; परन्तु ब्रह्माजीकी कृपासे वैकुण्ठमें भगवत्-स्वरूपकी माधुरीका साक्षात्कारकर भगवान्‌की उपासनामें प्रवृत्त हुए थे। इस प्रकार ब्रह्माजी कुमारोंके भी पिता एवं उपदेष्टा होनेके कारण उनके भी सब प्रकारसे पूज्य हैं। अतएव ब्रह्म-सम्प्रदाय ही आदि सम्प्रदायके रूपमें निर्णीत होता है।

गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदाय ब्रह्म-माध्व-सम्प्रदायके अन्तर्गत

सम्प्रदाय-तत्त्वको नहीं जनानेवालेसे कुछ अर्वाचीन (नवीन) व्यक्ति श्रीचैतन्य महाप्रभुको गौड़ीय सम्प्रदायका स्वतन्त्र प्रवर्तक मानकर गौड़ीय सम्प्रदायको ब्रह्म-माध्व-सम्प्रदायसे पृथक् एक पञ्चम सम्प्रदाय बतलाते हैं। परन्तु उनकी ऐसी कुचेष्टा सर्वथा निराधार एवं मनोकल्पित है। आधुनिक युगमें गौड़ीय-सम्प्रदायके महान् विद्वान आचार्य श्रील भक्तिविनोद ठाकुर, जो सप्तम गोस्वामीके रूपमें प्रख्यात हैं, इस विषयमें लिखते हैं—

"श्रीजीव गोस्वामीने आप्त-वाक्योंकी प्रमाणिकताको प्रमाणितकर पुराणोंकी प्रामाणिकताको भी उसी प्रकार स्थापित किया है। उन्होंने अपनी अकाट्य युक्तियों एवं शास्त्रीय प्रमाणोंके बलपर यह सिद्ध किया है कि श्रीमद्भागवत ही सर्वश्रेष्ठ एवं अमल प्रमाण है। जिन लक्षणोंके द्वारा उन्होंने श्रीमद्भागवतकी श्रेष्ठता स्थापित की है, उन्हीं लक्षणोंके द्वारा उन्होंने ब्रह्मा, नारद, व्यास तथा उनके साथ ही शुकदेव गोस्वामीको तथा तदनन्तर क्रमशः विजयध्वज, ब्रह्मण्यतीर्थ, व्यासतीर्थ आदिके तत्त्वगुरु मध्वाचार्यको तथा इनके द्वारा रचित या प्रमाणके रूपमें स्वीकृत ग्रन्थोंको भी श्रेष्ठ प्रमाणकी कोटिमें ग्रहण किया है। इसके द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्म-

माध्व सम्प्रदाय ही श्रीकृष्णचैतन्यके अनुगत गौड़ीय-वैष्णवोंकी गुरु-परम्परा है—श्रीजीवगोस्वामीका यही अभीष्ट है। तदनन्तर श्रीकवि कर्णपूर गोस्वामीने इसी गुरु-परम्पराकी पुष्टि स्वरचित 'गौरगणोद्देश-दीपिका'—नामक ग्रन्थमें की है। यही नहीं गौड़ीय वेदान्ताचार्य श्रीबलदेव विद्याभूषणने भी स्वरचित 'तत्त्व-सन्दर्भ' की टीकामें एवं 'प्रमेय रत्नावली' में इसी गुरु-परम्पराको ग्रहण किया है। जो लोग इस गुरु-परम्पराको अस्वीकार करते हैं, वे श्रीचैतन्यचरणानुचरोंके प्रधान शत्रु हैं—इसमें कोई सन्देह नहीं है।"

श्रीमन्महाप्रभु द्वारा ब्रह्म-माध्व-सम्प्रदायको अङ्गीकार करनेका कारण

श्रीमध्वमतमें भगवान् श्रीकृष्णका सच्चिदानन्द नित्य-विग्रह स्वीकृत है; इसी सिद्धान्तको अचिन्त्यभेदाभेदकी मूल भित्ति मानकर ही श्रीमन्महाप्रभुजीने श्रीमध्व सम्प्रदायको अङ्गीकार करनेकी कृपा की है।

ब्रह्म-माध्व-गौड़ीय सम्प्रदायके विषयमें कुछ भ्रान्तियाँ एवं उनका समाधान

तत्त्वसे अनजान कुछ व्यक्तियोंका भ्रम यह है कि "श्रीमन्महाप्रभु स्वयं भगवान् हैं। अतः वे स्वयं सम्प्रदाय-स्रष्टा हैं। वे किसी आचार्य द्वारा प्रवर्तित सम्प्रदायको क्यों अङ्गीकार करेंगे? दूसरी बात मध्व-प्रवर्तित द्वैतवादके सिद्धान्तोंके साथ गौड़ीय-सम्प्रदायके अचिन्त्यभेदाभेद सिद्धान्त मेल नहीं खाते हैं; दोनोंके साधन एवं सिद्धिके विचार भी भिन्न-भिन्न प्रतीत होते हैं। ऐसी दशामें गौड़ीय-सम्प्रदायको मध्व-सम्प्रदायके अन्तर्गत कैसे माना जा सकता है?"

उपरोक्त भ्रमका समाधान यह है कि यह पहले ही प्रमाणित किया जा चुका है कि भगवान् सर्वसमर्थ होकर भी स्वयं सम्प्रदायका प्रवर्त्तन नहीं करते; बल्कि अपनी शक्ति या शक्तिसे आविष्ट पुरुष द्वारा इस कार्यको साधित करते हैं। जैसे ब्रह्मा आदि शक्त्याविष्ट पुरुष हैं; लक्ष्मी उनकी शक्ति हैं। इसके अतिरिक्त यदि श्रीकृष्ण और श्रीराम आदि भी भगवान् होकर क्रमशः श्रीसान्दीपनी मुनि तथा श्रीवशिष्ठजीको गुरुरूपमें ग्रहण कर सकते हैं, तब श्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा, जो स्वयं कृष्ण ही हैं, ब्रह्म-माध्व सम्प्रदायको स्वीकार करनेमें कौन-सी बाधा हो सकती है? श्रीचैतन्य महाप्रभुने मध्वमतको कृपापूर्वक अङ्गीकार कर उसके अभावोंको पूर्ण करते हुए उसे वेदके सर्वदेशीय (परिपूर्ण) मत—अचिन्त्यभेदाभेदके रूपमें प्रतिष्ठित किया है।

गौड़ीय-सिद्धान्त और मध्व-सिद्धान्तमें भेद नहीं वैशिष्ट्य

भेद और वैशिष्ट्यमें अन्तर होता है। भेद किन्हीं भिन्न-भिन्न दो या अधिक वस्तुओं या धाराओं को पृथक् करता है; किन्तु वैशिष्ट्य—उसी एक धारामें विद्यमान रहते हुए भी भेदकी प्रतीति जैसा कराता है। यथा, गौड़ीय सम्प्रदायके सिद्धान्तोंका मध्व-सम्प्रदायके सिद्धान्तोंसे भेद नहीं है, बल्कि वैशिष्ट्य है। ये वैशिष्ट्य भेदका कारण नहीं बन सकते। यदि ऐसी बात होती, तब मुरारी गुप्त और अनुपम गोस्वामी (जीव गोस्वामीके पिता)—दोनों ही श्रीरामके उपासक होकर तथा श्रीवास पण्डित ऐश्वर्य-मार्गके उपासक होकर भी गौड़ीय-सम्प्रदायके अन्तर्गत नहीं स्वीकृत होते। मुरारी गुप्त, अनुपम एवं श्रीवास पण्डित गौड़ीय सम्प्रदायके अन्तर्गत हैं—यह सर्ववादी सम्मत है। यही नहीं, श्रीवास पण्डित श्रीमन्महाप्रभुके पार्षद एवं गौड़ीय सम्प्रदायके उपास्य पञ्चतत्त्वके अन्तर्गत माने जाते हैं। ऐसी दशामें कुछ वैशिष्ट्योंके कारण ही गौड़ीय-सम्प्रदायको मध्व-सम्प्रदायसे पृथक् एक स्वतन्त्र सम्प्रदाय मानना सर्वथा अनुपयुक्त और अनभिज्ञता है। अतएव अपने सम्प्रदायके पूर्व-पूर्व आचार्योंके ग्रन्थों एवं विचारोंके अनुसार गौड़ीय-सम्प्रदायने अपने वैशिष्ट्यको अक्षुण्ण रखते हुए भी ब्रह्म-माध्व-सम्प्रदायको अङ्गीकार किया है।

क्रमशः

[श्रीभागवत-पत्रिका, वर्ष-९,
संख्या-१२ से संग्रहीत अंश]

श्रीचरणामृत

साधारण–मन्त्र

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णोः पादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम्।।

गुरु–चरणामृत मन्त्र

अशेष–क्लेशनिःशेषकारणं शुद्धभक्तिदम्।
गुरोः पादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम्।।

गौर–चरणामृत मन्त्र

अशेष–क्लेशनिःशेषकारणं शुद्धभक्तिदम्।
गौर पादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम्।।

श्रीराधाकृष्ण–चरणामृत मन्त्र

श्रीराधाकृष्ण–पादोदकं–प्रेमभक्तिदं मुदा।
भक्तिभरेण वै पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम्।।

श्रीविष्णु और वैष्णवोंका चरणधौत–जल और श्रीशालग्राम शिलारूपी श्रीहरिका स्नान–जल अमृतस्वरूप होनेके कारण उसे श्रीचरणामृत कहा गया है। श्रीचरणामृत सर्वदा समस्त तीर्थोंकी अपेक्षा पवित्र होता है। श्रीकृष्णका चरणामृत पान करनेके बाद मस्तकपर धारण करना ही विधि मानी गयी है। श्रीचरणामृतका पानकर मनुष्य सब प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है। विष्णुका चरणामृत पान करनेसे कोटि–कोटि ब्रह्महत्याका पाप भी नष्ट हो जाता है। किन्तु, वही चरणामृत पृथ्वीपर गिर जानेसे आठगुणा पाप होता है। पद्मपुराणमें कहा गया है—"हे अम्बरीष! श्रीहरिका चरणामृत जिनके उदरमें अवस्थित रहता है, तुम्हें उनको प्रणामकर उनके चरणोंकी धूलि लेनी चाहिए।"

यदि श्रीशालग्रामशिलाके स्नान कराये हुए जलको प्रतिदिन पानकर मस्तकपर धारण किया जाय, तो सहस्त्रकोटि तीर्थोंमें स्नान करनेका प्रयोजन ही क्या है? कारण—गङ्गा, गोदावरी, रेवा ओर अन्यान्य मुक्ति देनेवाली नदियाँ समस्त तीर्थोंके साथ श्रीशालग्रामशिलाके जलमें वास करती हैं। यथा—

गङ्गा गोदावरी रेवा नद्यो मुक्तिप्रदास्तु याः।
निवसन्ति सतीर्थास्ताः शालग्रामशिला-जले।।
कोटितीर्थ-सहस्त्रैस्तु सेवितैः किं प्रयोजनम्।
तीर्थं यदि भवेत् पुण्यं शालग्रामशिलाद्भवम्।।

जो प्रतिदिन श्रीशालग्रामशिलाका चरणामृत पान करते हैं, उनका पुनः जन्म नहीं होता। श्रीचरणामृतका पान करनेसे तथा उसे मस्तकपर धारण करनेसे समस्त देवता प्रसन्न होते हैं। कलिकालमें श्रीहरिका चरणोदक (चरणधौत-जल) पान करनेसे समस्त पापोंका प्रायश्चित हो जाता है। गङ्गा श्रीहरिका चरणोदक है। सरस्वतीका जल पान करनेसे तीन दिनमें, नर्मदाका सात दिनमें, गङ्गाजल तत्क्षण तथा यमुनाका जल दर्शन मात्रसे पवित्र करता है। इनका दर्शन, कीर्तन तथा इनमें स्नान करनेसे ये पवित्र करते हैं। किन्तु, कलिकालमें श्रीहरिके चरणोदक (चरणधौत-जल) का स्मरण करनेसे ही पवित्रता लाभ होती है। इसके सम्बन्धमें शास्त्र कहते हैं—

त्रिभिः सारस्वतं तोयं सत्पाहेने तु नार्मदम्।
सद्यः पुनाति गाङ्गेयं दर्शनादेव यामुनम्।।
पुनन्त्येतानि तोयानि स्नानदर्शनकीर्त्तनैः।
पुनाति स्मरणादेव कलौ पादोदकं हरेः।।

(पद्मपुराण)

प्रतिदिन शिवलिङ्गका अर्चन करनेसे जितना फल होता है, श्रीचरणामृतका पान करनेसे उसकी अपेक्षा सहस्त्रगुणा अधिक फल होता है। यदि व्यक्ति अपवित्र हो, दुराचारी हो अथवा महापापी ही क्यों न हो, श्रीविष्णुके चरणामृतका स्पर्श करनेके साथ ही उसी क्षण वह पवित्र हो जाता है। कोटि-कोटि पातकोंसे युक्त रहनेपर भी मरनेके समय जिस व्यक्तिके मस्तक, मुख और देहमें विष्णुका चरणोदक स्पर्श कराया जाता है, वह यमलोकमें गमन नहीं करता। जिन लोगोंने कभी भी दान, होम, वेदपाठ अथवा देवताओंकी पूजा नहीं की है, वे लोग भी विष्णुके चरणोदक (चरणधौत-जल) का पानकर उत्तम गति प्राप्त करते हैं। जो चरणामृतको मस्तकपर धारण करते हैं, उनके प्रति ब्रह्मा, शिव और केशव सभी प्रसन्न रहते हैं। जो चरणामृतका माहात्म्य वर्णन करते हैं, वे भगवद्धाममें गमन करते हैं। जिनका आचरण चिरदिन तक आचारहीन रहा हो, ऐसे व्यक्तिको भी अन्तकालमें चरणामृतका पान करानेसे वह परम गति लाभ करता है। चरणामृतका पान करनेसे मद्यादिका पान करनेवाले, अभोज्यभोजी, कुमार्गी तथा पाप स्वभाववाले व्यक्ति भी शीघ्र ही वन्दनीय हो जाते हैं। प्रत्येक दिन चरणामृत पान करनेसे तथा मस्तकपर धारण करनेसे जरा, मृत्यु, दुःख और संसारसे मुक्ति पायी जाती है। श्रीचरणामृत मङ्गलस्वरूप, सुखदायक, दुःखनिवारक, शीघ्र फलप्रद, सर्वपापनाशक, दुःस्वप्ननाशक, सर्वविघ्नविनाशक और सब प्रकारकी व्याधियोंको दूर करनेवाला होता है। यथा—

सद्यः फलप्रदं पुण्यं सर्वपापविनाशनम्।
सर्वमङ्गल माङ्गल्यं सर्वदुःखविनाशनम्।।
दुःस्वप्ननाशनं पुण्यं विष्णुपादोदकं शुभम्।
सर्वोप्रदवहन्तारं सर्व व्याधिविनाशनम्।।

(विष्णुधर्मोत्तर)

श्रीचरणामृत मस्तकपर धारण करनेसे सब प्रकारके उपद्रव शान्त हो जाते हैं। वैष्णवराज शम्भु श्रीचरणामृतकी महिमासे अवगत हैं, इसीलिए उन्होंने विष्णुके चरणोंसे निकली हुई गङ्गाको अपने मस्तकपर धारण कर रखा है। महापापी और सैकड़ों रोगोंसे आक्रान्त व्यक्ति भी चरणामृत पान करनेसे उनसे मुक्त हो जाता है। महापापी होनेपर भी श्रीचरणामृत पानपूर्वक शरीर त्याग करनेसे यमदूत उसकी कुछ भी हानि नहीं कर सकते। ऐसे व्यक्ति यमदूतोंकी कुछ भी

परवाह न कर विष्णुलोकमें गमन करते हैं। विष्णुका चरणामृत पान करना ही परम धर्म है, परम तपस्या है। जो चरणामृतका पान करते है, उनका सभी तीर्थोंमें स्नान हो जाता है और वे विष्णुके अत्यन्त प्रिय होते हैं। श्रीचरणामृत अकाल मृत्यु, सब प्रकारकी व्याधियों तथा दुःखोंका विनाश करता है। श्रीचरणामृत पान करनेसे भगवान्‌के चरणोंमें भक्ति भी प्राप्त होती है।

बृहन्नारदीय पुराणमें कहा गया है—लुब्धक नामक एक बहेलियेने चरणामृतका स्पर्श पाकर साथ-ही-साथ निष्पाप होकर उत्तम विमानमें आरूढ़ होकर मुनिके प्रति कहा था—हे मुने! आपने मुझपर चरणामृत छिड़का है, इसीलिए मुझे विष्णुके परम पदकी प्राप्ति हुई।

सात समुद्रोंका जल भी त्रितापकी ज्वाला शान्त नहीं कर सकता, किन्तु अल्पमात्र चरणामृतके द्वारा ही इस संसारकी अग्नि आसानीसे बुझ जाती है। चरणामृत अमूल्य होता है, अन्य किसी भी वस्तुसे इसकी तुलना नहीं हो सकती। समुद्रकी तरङ्गे गिनी जा सकती हैं, किन्तु चरणामृतकी अनन्त महिमाका वर्णनकर शेष नहीं किया जा सकता है।

भक्तोंका चरणामृत भी श्रीहरिचरणामृतकी भाँति पवित्र होता है। भक्त-चरणामृत भी सर्वतीर्थ-स्वरूप, सर्वप्रकारके अशुभोंका विनाशक और मङ्गलप्रद होता है। भक्त-चरणामृतकी महिमाका भी वर्णनकर शेष नहीं किया जा सकता। इसीलिए शास्त्रोंका कहना है—

येषां पादरजेनैव प्राप्यते जाह्नवीजलम्।
नार्मदं यामुनञ्चैव किं पुनः पादयोर्जलम्।।
येषां वाक्यजलौघेन विना गङ्गाजलैरपि।
विना तीर्थसहस्त्रेण स्नातो भवति मानव।।

(स्कन्द पुराण)

अर्थात् जिनके चरणरेणुसे जाह्नवी, नर्मदा और यमुनाका जल प्राप्त होता है और जिनके भक्तोंके श्रीमुखसे निकले हुए हरिकथामृतका पान करनेसे सज्जनवृन्द बिना असंख्य तीर्थोंमें स्नान करनेपर भी पवित्र हो जाते हैं, उन भक्तोंके चरणामृतके माहात्म्यका और अधिक क्या वर्णन करूँ? श्रीमद्भागवत (११/६/१९) में कहा गया है—"हे हृषीकेश! आपने त्रिलोकीकी पाप-राशिको धोनेके लिए दो प्रकारकी पवित्र नदियाँ बहा रखी हैं—एक तो है आपकी अमृतमयी लीलासे भरी कथानदी और दूसरी है आपके पाद-धोवन जलसे भरी गङ्गाजी। अतः सत्सङ्गसेवी विवेकीजन कानोंके द्वारा आपकी कथानदीमें और शरीरके द्वारा गङ्गाजीमें गोता लगाकर दोनों ही तीर्थोंका सेवन करते हैं और अपने पाप-ताप मिटा देते हैं।" श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी भी दृढ़तापूर्वक कहते हैं,—

भक्त पदधूलि आर भक्तपद जल।
भक्तभुक्त-अवशेष एइ तीन साधनेर बल॥
एइ तीन-सेवा हैते कृष्ण-प्रेमा हय।
पुनः पुनः सर्वशास्त्रे फुकारिया कय॥
ताते बार बार कहि, सुन भक्तगन।
विश्वास करिया कर ए तीन-सेवन॥

(चैतन्यचरितामृत अन्त्य १६/६०-६२)

अर्थात्, भक्तपदरज, भक्तपदधौत जल और भक्तोंका उच्छिष्ट—ये तीनों भगवद्भजनमें प्रधान सहायक हैं। इन तीनोंका श्रद्धापूर्वक सेवन करनेसे कृष्णप्रेमकी प्राप्ति होती है। ऐसा सभी शास्त्रोंमें पुनः पुनः कहा गया है। इसलिए हे भक्तवृन्द! मैं बार-बार आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप लोग विश्वासपूर्वक इन तीनोंका सेवन करें।

श्रीविष्णु और वैष्णवोंका परम पवित्र चरणामृत पान करनेके बाद आचमन नहीं करना चाहिए। इसके सम्बन्धमें शास्त्रका कथन है—

विष्णु पादोदकं पीत्वा भक्तपादोदकं तथा।
य आचमति सम्मोहाद्ब्रह्महा सनिगद्यते।।

(गरुड़पुराण)

जो श्रीहरि और हरिके भक्तोंका चरणामृत पान करनेके बाद अज्ञानवश भी आचमन करते हैं, उनकी गणना ब्रह्मघातियोंमें की जाती है।

[श्रीभागवत-पत्रिका वर्ष-४०, संख्या-५ से संग्रहीत]

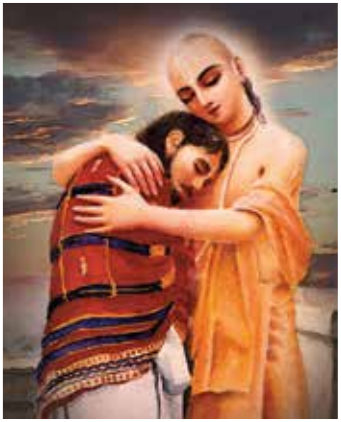

धारावाहिक

श्रीगौराङ्ग-सुधा

—श्रीपरमेश्वरी दास ब्रह्मचारी

(वर्ष-१९, संख्या—१-४ से आगे)

श्रील रामानन्दरायकी महिमाका वर्णन

श्रीमन्महाप्रभु बोले—"मिश्र! रामानन्दराय विनयके भण्डार हैं। वे अपनी महिमाको दूसरेपर आरोपित कर देते हैं। महापुरुषोंको ऐसा ही स्वभाव होता है कि वे स्वयं अपने गुणोंका गान नहीं करते।"

इस प्रकार श्रीमन्महाप्रभु स्वयं ही श्रीरामानन्दरायकी महिमाका गान कर रहे हैं। बाह्यरूपमें श्रीरामानन्दराय गृहस्थ होनेपर भी वे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य-रूपी षड्रिपुके दास नहीं हैं। वे विषयी होकर भी संन्यासियोंको शिक्षा प्रदान करते हैं। रामानन्दरायके इन सभी गुणोंको प्रकाशित करनेके लिए ही श्रीमन्महाप्रभुने प्रद्युम्नमिश्रको उनके पास कथा सुननेके लिए भेजा था। भक्तोंकी महिमा कैसे प्रकाशित की जाय, भगवान् इसे भलीभाँति जानते हैं। विभिन्न प्रकारसे भक्तोंकी महिमाको प्रकाशितकर ही भगवान्को आनन्दकी प्राप्ति होती है।

जगद्गुरु श्रीगौरहरिकी लोकशिक्षाका रहस्य

इस जगत्में जो यह समझते हैं कि भगवान्की कथाओंका कीर्तन या उनका भजन केवल संन्यासी या ब्राह्मण ही कर सकते हैं, उनके ऐसे अहङ्कारका नाश करनेके लिए ही भगवान् नीच-शूद्रके द्वारा भी धर्मका प्रचार करवाते हैं। जैसे—स्वयं महाप्रभु संन्यास-आश्रमी हैं तथा उच्चकुलीन ब्राह्मण भी हैं। चारों वर्णोंमें ब्राह्मण वर्ण श्रेष्ठ होता है तथा चारों आश्रमोंमें संन्यास आश्रम सबसे श्रेष्ठ होता है। इसके अनुसार श्रीमन्महाप्रभु श्रीरामानन्दरायसे सब प्रकारसे श्रेष्ठ हैं, क्योंकि रामानन्दराय शूद्र वर्णके हैं तथा गृहस्थ-आश्रमी हैं। अतः सब प्रकारसे महाप्रभुसे निकृष्ट हैं। उसी प्रकार प्रद्युम्नमिश्र भी वर्णके अनुसार रामानन्दरायसे श्रेष्ठ हैं, क्योंकि वे भी ब्राह्मण वर्णके हैं। तथापि श्रीमन्महाप्रभुने श्रीरामानन्दरायके मुखसे स्वयं भी भक्ति, प्रेम एवं तत्त्वकी कथाओंको सुना तथा श्रीप्रद्युम्नमिश्रको भी उनसे कथा सुननेके लिए भेजा। इसी प्रकार श्रीमन्महाप्रभुने यवनकुलमें उत्पन्न श्रीहरिदास ठाकुरके द्वारा जगत्में श्रीहरिनामका प्रचार करवाया तथा श्रीरूप गोस्वामी तथा श्रीसनातन गोस्वामी जो कि एक यवन राजाके कर्मचारी थे, उनके द्वारा भक्तिरस-शास्त्रोंको प्रकाशित करवाया।

इस प्रकार श्रीमन्महाप्रभु नीलाचलमें निवास करते समय अपने भक्तोंके साथ विभिन्न लीलाएँ करते हुए भक्ति प्रचार कर रहे थे। एकदिन बङ्गदेशका निवासी एक विप्र श्रीमन्महाप्रभुके जीवन-चरित्रपर एक नाटक लिखकर उसे श्रीमन्महाप्रभुको सुनानेके लिए आया। भगवान्-आचार्यके साथ उसका अच्छा परिचय था। अतः नीलाचल आकर वह उनके घर गया। उसने पहले उस नाटकको भगवान्-आचार्यको सुनाया। उस समय भगवान्-आचार्यके साथ बहुत-से अन्य वैष्णवोंने

भी उस नाटकको सुना। सुननेके बाद सभीने उस नाटककी बहुत प्रशंसा की। अब सबकी इच्छा हुई कि इस नाटकको श्रीमन्महाप्रभुको सुनाना चाहिए, इसे सुनकर महाप्रभुको बहुत ही आनन्द होगा। उस समय वहाँकी परिपाटी थी जो कोई भी कुछ भी गीत, श्लोक, ग्रन्थ अथवा कविता आदि लिखकर लाता था, तो उसे पहले श्रीस्वरूप दामोदरजीको सुनाया जाता था। जब श्रीस्वरूप दामोदरजी उसका अनुमोदन कर देते थे, तभी उसे श्रीमन्महाप्रभुको सुनाया जाता था। कारण—यदि उस श्लोक अथवा ग्रन्थादि रचनामें किसी प्रकारका रसाभास दोष या सिद्धान्तविरोधी बातें होती थीं, तो महाप्रभु उसे सहन नहीं कर पाते थे तथा उन्हें क्रोध आ जाता था। इसीलिए महाप्रभुने ऐसा नियम बनाया था कि जो कोई भी कुछ भी लिखकर लाता था, उसे पहले स्वरूप दामोदरजीको सुनाया जाता था।

इसलिए भगवान् आचार्यने पहले श्रीस्वरूप दामोदरसे निवेदन किया—"स्वरूप दामोदरजी! इन पण्डित महाशयने श्रीमन्महाप्रभुके ऊपर एक नाटक लिखा है। आपसे मेरा निवेदन है कि एकबार उसे सुन लीजिए, यदि आपको उचित लगेगा, तो मैं उसे महाप्रभुको सुनाऊँगा।" यह सुनकर श्रीस्वरूप दामोदर उन्हें स्नेहसे झिड़कते हुए बोले—"भगवान् आचार्यजी! आप बहुत भोले-भाले हैं। इसीलिए आपकी जिस किसी भी शास्त्रको सुननेकी इच्छा हो जाती है। जैसे-तैसे कवियोंकी रचनाओंमें रसाभास दोष या अपसिद्धान्त होते हैं, जिन्हें श्रवणकर आनन्द नहीं होता। जिसे रस तथा रसाभासका ज्ञान नहीं है, वह भक्ति-तत्त्वको नहीं समझ सकता। जिसे व्याकरण एवं अलङ्कारोंका ज्ञान नहीं है, ऐसा व्यक्ति कभी भी कृष्णलीलाओंका वर्णन नहीं कर सकता। विशेषरूसे श्रीमन्महाप्रभुकी लीलाएँ और भी अधिक दुर्गम हैं। कृष्णलीला तथा गौरलीलाका वर्णन वही कर सकता है, जिसपर कृष्ण एवं महाप्रभुकी कृपा हो। ग्राम्य कवियों अर्थात् जो कवि सांसारिक स्त्री-पुरुषोंके विषयमें कविता आदि लिखते हैं, उनके द्वारा भगवान्‌के विषयमें लिखे गीत आदिको श्रवणकर दुःख होता है।"

यह सुनकर भगवान् आचार्य बोले—"आप एकबार स्वयं पण्डित महाशयका नाटक श्रवण तो कर लीजिए। उसके बाद ही आप समझ पायेंगे कि वह नाटक महाप्रभुको सुनानेके योग्य है कि नहीं।" इस प्रकार जब भगवान् आचार्यने दो-तीन बार आग्रह किया तो श्रीस्वरूप दामोदरकी उस नाटकको श्रवण करनेकी इच्छा हो गयी। इसलिए सभी भक्तोंके साथ वे उस नाटकको सुननेके लिए बैठ गये। तब उस विप्रने उस नाटकके नान्दी-श्लोकको पढ़ा—

विकचकमलनेत्रे श्रीजगन्नाथसंज्ञे
कनकरुचिरिहात्म्यात्मतां यः प्रपन्नः।
प्रकृतिजड़मशेषं चेतयन्नाविरासीत्
स दिशतु तव भव्यं कृष्णचैतन्यदेवः॥

(बङ्गदेशीय-विप्रकृत-श्लोक)

अर्थात् स्वभावतः जड़ विश्वको चैतन्य प्रदान करनेके लिए स्वर्णवर्ण कान्तिसे युक्त जो श्रीचैतन्यदेव प्रफुल्लनयन श्रीजगन्नाथ-नामक देहमें आत्मस्वरूपता प्राप्त होकर इस ब्रह्माण्डमें आविर्भूत हुए हैं, वे श्रीकृष्णचैतन्यदेव आपका कल्याण करें।

इस श्लोकमें दोष दिखा रहे हैं—जीवके देहमें देही या जीवात्मा रहती है; देह स्वभावतः जड़ या मृत है तथा जीवात्मा चेतन है। श्रीजगन्नाथजीका विग्रह चल-फिर नहीं सकता, इसलिए विप्रने श्रीजगन्नाथको जड़देह कहा है तथा श्रीमन्महाप्रभुको उस देहमें स्थित आत्मा कहा है। इस प्रकारसे उसने श्रीमन्महाप्रभु तथा श्रीजगन्नाथमें भेद बुद्धि की है।

श्लोक सुनकर श्रीस्वरूप दामोदरजीने उस विप्रसे उस श्लोकका अर्थ बतानेके लिए कहा। विप्र कहने लगा—"श्रीजगन्नाथजीका शरीर अतीव सुन्दर है तथा श्रीचैतन्य-महाप्रभु उस शरीरके शरीरी हैं। सहजरूपमें

सत्य कह रहे हैं। इस विप्रने श्रीजगन्नाथजी तथा श्रीमन्महाप्रभु दोनोंका ही अनादर किया है।" यह सुनकर वह विप्र बहुत ही लज्जित, भयभीत तथा विस्मित हो गया। विप्रको इस स्थितिमें देखकर परम दयालु श्रीस्वरूप दामोदरजी उसके कल्याणके लिए उसे उपदेश प्रदान करते हुए बोले—"*जाह भागवत पढ़ वैष्णवेर स्थाने, एकान्त आश्रय कर चैतन्य चरणे*। अर्थात् यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो, तो पूर्णरूपसे श्रीचैतन्य महाप्रभुके श्रीचरणोंका आश्रय ग्रहणकर वैष्णवोंके श्रीमुखसे ही भागवत श्रवण करो तथा श्रीचैतन्य महाप्रभुके भक्तोंका सङ्ग करो। तभी तुम सिद्धान्त-सागरकी तरङ्गोंको समझ सकते हो। तभी तुम्हारा पाण्डित्य सफल होगा, तभी तुम कृष्णकी निर्मल लीलाओंका वर्णन कर सकते हो। तुमने यह जो श्लोक लिखा है, इसके अनुसार श्रीजगन्नाथजी एवं श्रीमन्महाप्रभु—दोनोंके ऊपर दोष आ गया है अर्थात् दोनोंकी ही महिमा कम हो गयी। यद्यपि तुमने उनके विषयमें निन्दासूचक शब्दोंका प्रयोग किया है, परन्तु सरस्वती देवीने उन्हीं शब्दोंके द्वारा भगवान्‌की स्तुति ही की है। जिस प्रकार देवराज इन्द्र तथा कई असुरोंने भगवान्‌की निन्दा की, परन्तु देवी सरस्वतीने उन्हीं शब्दोंके द्वारा भगवान्‌की स्तुति की है। जैसे—जब कृष्णने इन्द्रकी पूजा बन्द करवाकर गोवर्धनकी पूजा आरम्भ करवा दी, तो इन्द्रने कुपित होकर कृष्णकी निन्दा करते हुए कहा था—

वाचालं बालिशं स्तब्धमज्ञं पण्डितमानिनम्।
कृष्णं मर्त्यमुपाश्रित्य गोपा मे चक्रुरप्रियम्॥

(भा—१०/२५/५)

ही जड़-जगत्‌को चेतन करनेके लिए श्रीमन्महाप्रभु नीलाचलमें आविर्भूत हुए [गमन किए] हैं। अर्थात् श्रीजगन्नाथ देह हैं तथा श्रीमन्महाप्रभु उनके देही हैं।"

यह सुनते ही श्रीस्वरूप दामोदरजीको बहुत कष्ट हुआ। वे क्रुद्ध होकर कहने लगे—"अरे मूर्ख! तुमने अपना सर्वनाश कर लिया है। श्रीजगन्नाथ तथा श्रीचैतन्य महाप्रभु दोनों ही ईश्वर हैं, तुम्हें इसका विश्वास नहीं है। पूर्णानन्द-चित्स्वरूप श्रीजगन्नाथको तुमने जड़-प्राकृत-देह बता दिया तथा श्रीचैतन्य महाप्रभु जो स्वयं भगवान् हैं, उन्हें तुमने चिङ्गारीके समान क्षुद्र जीव बता दिया। इस प्रकार तुमने दोनोंके ही प्रति अपराध किया है। अतः इस अपराधके कारण तुम्हारी दुर्गति होनेवाली है। अतत्त्वज्ञ व्यक्ति यदि तत्त्वका वर्णन करता है, तो यही अवस्था होती है। इसके अतिरिक्त तुमने एक और अपराध किया है। तुमने भगवान्‌में देह-देहीका भेद बताया है। किन्तु भगवान्‌में देह-देहीका भेद नहीं होता। भगवान्‌का नाम, विग्रह तथा उनका स्वरूप एक ही है। उनमें लेशमात्र भी भेद नहीं होता है। कहाँ पूर्णानन्द-ऐश्वर्यमय परमेश्वर कृष्ण तथा कहाँ सर्वदा दुःखी मायाका दास क्षुद्र जीव। अर्थात् दोनोंमें कोई तुलना ही सम्भव नहीं है, परन्तु तुमने दोनोंको समान मान लिया है।"

यह सुनकर सभी लोग चमत्कृत हो गये। वे सभी एकस्वरसे कहने लगे—"स्वरूप दामोदरजी

अर्थात् इन्द्रने कहा था—इस वाचाल, मूढ़, स्तब्ध, अज्ञ, पण्डिताभिमानी मरणशील कृष्णका आश्रय लेकर इन गोपोंने मेरा तिरस्कार किया है।

किन्तु देवी सरस्वती भगवान्‌की निन्दा नहीं सुन सकती। इसलिए उन्होंने उन सभी शब्दोंके द्वारा कृष्णकी स्तुति कर दी, जिनके द्वारा इन्द्रने कृष्णकी निन्दा की थी। 'वाचाल'का निन्दासूचक अर्थ होता है—जो बहुत व्यर्थकी बातें बोलता है। परन्तु देवीने इसका स्तुति-सूचक अर्थ कर दिया—जो समस्त शास्त्रोंका प्रवर्तक है अर्थात् जिनसे समस्त शास्त्र प्रकाशित हुए हैं। 'बालिश' शब्दका निन्दासूचक अर्थ है—बालक। देवीने इसका स्तुति-सूचक अर्थ किया—जो बालककी भाँति निराभिमानी है। 'स्तब्ध' शब्दका निन्दासूचक अर्थ है—अविनीत अर्थात् जो किसीके समक्ष झुकता नहीं है। देवीने इसका स्तुति-सूचक अर्थ किया—जिनसे श्रेष्ठ कोई दूसरा न होनेके कारण जो किसीके समक्ष झुकते नहीं। 'अज्ञ' शब्दका निन्दासूचक अर्थ है—मूर्ख। देवीने स्तुति-सूचक अर्थ किया—जिनसे श्रेष्ठ ज्ञानी अन्य कोई नहीं है। 'पण्डितमानी'का निन्दासूचक अर्थ है—जिसे अपने पाण्डित्यका अभिमान है। देवीने स्तुति-सूचक अर्थ किया—बड़े-बड़े पण्डितगण भी जिनका सम्मान करते हैं। 'मर्त्य' शब्दका निन्दासूचक अर्थ है—मरणशील मनुष्य। देवीने स्तुति-सूचक अर्थ किया—भक्तवात्सल्यवशतः जो मनुष्यकी भाँति प्रतीत होते हैं। अर्थात् जो स्वयं परमब्रह्म होकर भक्तवात्सल्यवशतः अपनेको सामान्य मनुष्य मानते हैं।

इसी प्रकार जरासन्धने भी कहा था—"कृष्ण! तू पुरुष-अधम है। तू अपने बन्धुओंका हत्यारा है। अतः तेरे साथ मैं युद्ध नहीं करूँगा।" यहाँपर जरासन्धके कहनेका तात्पर्य है कि कृष्णने अपने बन्धु मामा कंसका वध किया, अतः वे बन्धुहन् है। परन्तु देवी सरस्वतीने जरासन्धके इन निन्दासूचक शब्दोंकी व्याख्या की—पुरुष-अधम—जिनके समक्ष सभी पुरुष अधम अर्थात् निकृष्ट हैं, वे 'पुरुष-अधम' अर्थात् 'पुरुषोत्तम' हैं। एवं बन्धुहन्—संसारमें जो उन्नतिकी आशा करता है, उसे बन्धु कहते हैं; माया या अविद्या ही 'बन्धु' हैं; अतः अविद्या या मायाका हनन करनेवाला ही 'बन्धुहन्' कहलाता है। कृष्ण अविद्याका विनाश करते हैं, अतः वे 'बन्धुहन्' हैं।

इसी प्रकार शिशुपालने भी कृष्णकी निन्दा करते हुए जितने भी कृष्णकी निन्दासूचक शब्दोंका प्रयोग किया था, सरस्वती देवीने उन सभीकी व्याख्या कृष्णकी स्तुति-अर्थमें की थी।

उसी प्रकार तुम्हारे इस श्लोकमें जो 'निन्दा-सूचक' शब्द हैं, सरस्वती देवीने उनका अर्थ 'स्तुति'के रूपमें इस प्रकारसे कर दिया—"श्रीजगन्नाथदेव कृष्णके आत्मस्वरूप हैं। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि एक ही विग्रह स्वेच्छासे जगत्-उद्धारके लिए दो स्वरूपोंमें प्रकाशित है। श्रीजगन्नाथदेव दर्शन प्रदानकर संसार-बन्धनका नाश करते हैं। परन्तु सब लोग उनके दर्शनोंके लिए नहीं जा सकते। इसलिए उन लोगोंका उद्धार करनेके लिए श्रीगौरहरि जङ्गम-रूपमें जगत्‌में अवतीर्ण होकर स्वयं गाँव-गाँव, घर-घर जाकर जीवोंका उद्धार करते हैं।

अतः हे विप्र! तुम्हारा परम सौभाग्य है कि स्वयं सरस्वती देवीने तुम्हारे निन्दासूचक शब्दोंका ऐसा अर्थ किया है। कृष्णकी निन्दा करते हुए भी यदि कोई कृष्ण-नामका उच्चारण करता है, तो वह उसका नामाभास कहलाता है, जिसके प्रभावसे वह व्यक्ति मुक्तिका अधिकारी बन जाता है।"

यह सब श्रवणकर उस विप्रने सभीके श्रीचरणोंमें प्रणाम किया तथा परम दीनतापूर्वक सभीके चरणोंमें आश्रय ग्रहण किया। तब भक्तोंने उसे अपना लिया तथा उसे श्रीमन्महाप्रभुसे मिलाया तथा महाप्रभुको उसके गुणोंके विषयमें भी बताया। तत्पश्चात् उस विप्रने सबकुछ त्याग दिया तथा श्रीजगन्नाथ पुरीमें ही रहकर वह श्रीमन्महाप्रभु तथा उनके भक्तोंके आनुगत्यमें भगवान्‌का भजन करने लगा।

क्रमशः

श्रील गुरुदेव ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री
श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी
द्वारा
भारतमें प्रतिष्ठित शुद्धभक्ति प्रचार केन्द्रसमूह

१. **श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ**, जवाहर हाट, मथुरा, उ. प्र. ☎ ९७१९०७०९३९

२. **श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ**, दानगली, वृन्दावन, उ. प्र. ☎ ९२१९४७८००१

३. **श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठ**, कोलेरडाङ्गा लेन, नवद्वीप, नदीया, प. बं. ☎ ९३३३२२२७७५

४. **श्रीदुर्वासा-ऋषि गौड़ीय आश्रम**, ईशापुर, मथुरा, उ. प्र. ☎ ९९१७६४३९७१

५. **श्रीगोपीनाथ-भवन,** इमली-तला, परिक्रमा-मार्ग, वृन्दावन, उ. प्र. ☎ ९६३४५६३७३९

६. **श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ**, दसविसा, राधाकुण्ड रोड़, गोवर्धन, उ. प्र. ☎ (०५६५)२८१५६६८

७. **श्रीरमणबिहारी गौड़ीय मठ**, बी-३, जनकपुरी, नई दिल्ली ☎ (०११)२५५३३२६८

८. **श्रीवामन गोस्वामी गौड़ीय मठ**, ३९ रामानन्द चटर्जी स्ट्रीट, कोलकाता-९ ☎ ९४३३२०३७१८

९. **श्रीनारायण गोस्वामी गौड़ीय मठ**, ३१/२८ दीनबन्धु मित्रा सरणी, सुभाषपल्ली, सिलीगुड़ी (प.बं.) ☎ ८६२९९११४००

१०. **जयश्रीदामोदर गौड़ीय मठ**, चक्रतीर्थ, पुरी, उड़ीसा ☎ ९७७६२३८३२८

११. **श्रीराधागोविन्द गौड़ीय मठ**, डी-५, सेक्टर-५५, नोएडा (उ.प्र.) ☎ (०१२०)२५८२०१८

१२. **श्रीरङ्गनाथ गौड़ीय मठ**, सर्वे-२६, हेसेरघट्टा, नृत्यग्राम कुटीरके पास, बङ्गलोर ☎ (०८०)२८४६६७६०

१३. **श्रीश्रीगोविन्दजी गौड़ीय मठ**, मकान-२, गली-५, रूपनगर एन्क्लेव, जम्मू ☎ ९९०६९०४८०९

१४. **श्रीराधामाधवजी गौड़ीय मठ**, माधवी कुञ्ज, भूपतवाला, हरिद्वार ☎ (०१३३४)२६०८४५

१५. **आनन्द धाम गौड़ीय आश्रम**, परिक्रमा मार्ग, रमणरेती, वृन्दावन, उ. प्र. ☎ (०५६५)२५४०८४९

१६. **श्रीराधामदनमोहन गौड़ीय मठ,** २४५/१, २९वाँ क्रास, खगदास पुर, मैंन रोड़, बङ्गलूरु-५६००९३ ☎ ९९००१९२७३८

१७. **श्रीश्रीराधामाधव गौड़ीय मठ**, १६२, सैक्टर-१६-ए, फरीदाबाद, हरियाणा ☎ ९९११२८३८६९

RNI NO. - UPHIN/2004/13352
POSTAL REGN NO. - MATHURA - 013/2022-2024
DATE OF PUBLICATION - 28 OCTOBER 2022

पारमार्थिक सचित्र हिन्दी पत्रिका श्रीश्रीभागवत-पत्रिकाके सदस्य बनें

एक वर्षीय (1 yr) – 300 रु॰

पञ्च वर्षीय (5 yr) – 1,200 रु॰

आजीवन (Lifetime) – 7,500 रु॰
[750 रु॰ के भक्तिग्रन्थ उपहार]

संरक्षक (Patron) – 10,000 रु॰
[1000 रु॰ के भक्तिग्रन्थ उपहार]

सदस्यता भुगतानके लिए

(१) **Bank to bank NEFT transfer**

Account name:	SRI BHAGVAT PATRIKA SRI GOUDIYA
Account no. :	037201000010611
IFSC code:	IOBA0000372
Bank:	Indian Overseas bank

(To help us update your subscription records after the bank deposit or transfer, immediately send an SMS to 9818779345 with your name, amount deposited and date of deposit.)

(२) **Demand draft or Cheque** (account payee) payable to: "SRI BHAGVAT PATRIKA SRI GOUDIYA" पत्रिका कार्यालयके पते पर Demand draft or Cheque भेजें।

(३) **Money order** निम्न पते पर भेजें।
श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ, १९४ सेवा-कुञ्ज, वृन्दावन(उ.प्र.)-२८११२१

सम्पर्क सूत्र

श्रीश्रीभागवत-पत्रिका कार्यालय
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
जवाहर हाट, मथुरा-२८१००१ (उ.प्र.)

श्रीश्रीभागवत-पत्रिकामें प्रकाशित प्रबन्ध-समूह एवं विषय-वस्तुसे सम्बन्धित जानकारीके लिए सम्पर्क करें –
e-mail: gokulchandradas@gmail.com
phone: 9897140412

श्रीश्रीभागवत-पत्रिकाकी सदस्यता-शुल्कके भुगतान एवं नवीन सदस्यता ग्रहण करनेके लिए सम्पर्क करें –
e-mail: bhagavata.patrika@gmail.com
phone: 9810654916; 8368371929